इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ६ अंक १ चैत्र मास कलियुगाब्द ५११८ अप्रैल २०१६

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादन सहयोग :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ० ओम प्रकाश शर्मा

टंकण एवं सज्जा :
रवि ठाकुर

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव-नेरी, डाकघर-खगल
जिला-हमीरपुर-१७७००१(हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२-२०३०४४

मूल्यः
प्रति अंक - १५.०० रुपये
वार्षिक - ६०.०० रुपये
itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

नवसंवत्सर

चैत्र संक्रान्ति और नया संवत्	डॉ. सूरत ठाकुर	३
नये संवत् में जौ की फसल का जौ-लाई त्यौहार	तोबदन	८
नया संवत् में ढोलरू गायन	चंचल कुमार	११

संवीक्षण

प्राचीनतम कालगणना की आधुनिकता और वैज्ञानिकता	डॉ. मुरली मनोहर जोशी	१८
संस्कृति के मूल्य और संस्कृति के आदर्श	माधव गोविन्द वैद्य	२४
ॐ जग जगदीश हरे! आरती के रचयिता	प्रो. आर. के. पराशर	३०

लोकाख्यान

राजस्थान की लोक गाथाओं में इतिहास संदर्भ	उमा शंकर जोशी	३७

ध्येय पथ

ठाकुर रामसिंह जी के जन्म-शताब्दी के कार्यक्रम	चेतराम गर्ग	४२

सम्पादकीय

जौ की महिमा

हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिला की एक पंचायत है – बाराहार। बाराहार के नम्बरदार के ज्येष्ठ पुत्र थे हुक्म राम। पिता के देहान्त के बाद नम्बरदार ज्येष्ठ पुत्र को बनना था, लेकिन उसने फक्कड़ प्रवृत्ति के कारण नम्बरदार का पद नहीं सम्भाला, जो उसके छोटे भाई को सम्भालाना पड़ा। स्वयं उनका घूमने-फिरने और गप्प-शप्प लगाने का शौक रहा। हम तब छोटे-छोटे थे, और उन्हें लोगों से यह प्रश्न करते सुनते थे कि यह बताओ कि अनाज़ों में सबसे पवित्र या जरूरी अनाज कौन है। इसका उत्तर कोई और न बता पाएं तो वे स्वयं बताते थे कि जौ सबसे पवित्र और जरूरी अनाज है। मनुष्य के जन्म से ले कर मृत्यु पर्यन्त किसी भी अनुष्ठान के लिए जौ की आवश्यकता रहती है, जो इसकी पवित्र उपयोगिता है और भोजन के रूप में यह पौष्टिक अन्न है। जौ के **सत्तू** *की अपनी विशेष गुणवता है।*

आज उनकी बात स्मरण में आती है तो ज्ञात होता है, उनकी बात में पूर्ण सच्चाई है। वेदों में भी अन्नों में यव (जौ) का प्राधान्य है। जैसे कि ऋग्वेद में एक स्थान पर जौ द्वारा भूख से पार होने की बात कही गई है– **यवेन विश्वां क्षुधं तरेम** *(ऋ.१०.४२.१०)।* **सत्तू (सक्तु)** *का भी वेदों में वर्णन है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि छलनी से शुद्ध किए सत्तू की भान्ति ही बुद्धिमान व्यक्ति मन से शुद्ध वाणी का प्रयोग करते हैं–*

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत। *(ऋ. १०.७१.२)*

भारतीय परम्परा में नवरात्रों में विशेषतः नया सम्वत् के साथ आरम्भ होने वाले चैत्र नवरात्रे और आश्विन नवरात्रों में भगवती पूजनार्थ जौ के **जवार** *उगाए जाते हैं। हिमाचल प्रदेश में जवार को* **जौरा** *या* **लूंग** *कहा जाता है। जिसका उपयोग जौ-पुष्प के रूप में यहां देवताओं और मनुष्यों के साज-शृंगार में किया जाता है। प्रस्तुत अंक में सम्मिलित श्री तोबदन जी के लेख* **नये सम्वत् में जौ की फसल का जौ लाई त्यौहार** *में जौरे का उल्लेख है। लाहौल में इसे* **यवराग** *कहते हैं। यह शब्द जौ के मूल संस्कृत शब्द यव को अभी भी अपने में संजोए हुए है। इस लेख में सत्तू का भी वर्णन हुआ है।*

जौ नया सम्वत् के अवसर पर तैयार होने वाली पहली फसल है। इसी उपलक्ष्य में कुल्लू और मण्डी ज़िला के कुछ क्षेत्रों में वैशाख मास में **सलाहर का त्यौहार** *मनाते हैं। सिलाहर शब्द* **शिला आहार** *से बना है। इस दिन देव विधान के अनुसार जौ को काटते हैं और उसकी शिल (बाली) का आहार ग्रहण करते हैं। मण्डी ज़िला की पराशर झील में वैशाख मास में देवता पराशर का* **काशी मेला** *लगता है। इसमें जौ की काशी (जौ की काटी डालियों की गड्डी) देवता को भेंट कर के लोगों में इसका प्रसाद वितरित किया जाता है। इस प्रकार जौ की महिमा शास्त्र और लोक परम्परा में सर्वत्र व्याप्त है।*

नवसंवत्सर कलियुगाब्द ५११८, विक्रमी संवत् २०७३ तथा शक संवत् १९३८ की शुभकामनाएं।

विनीत,

डॉ. विद्या चन्द ठाकुर

चैत्र संक्रान्ति और नया संवत्

डॉ. सूरत ठाकुर

भारतीय परम्परा के अनुरूप हिमाचल प्रदेश में भी नव वर्ष का प्रारम्भ चैत्र मास से माना जाता है। चैत्र के आगमन के साथ-साथ प्रत्येक जड़-चेतन में एक नये रस का संचार होने लगता है। पेड़-पौधों में नई कोंपलें फूटने लगती हैं। प्रत्येक प्राणी शिशिर ऋतु की ठिठुरती ठण्डक से मुक्ति पाता है। जनमानस की प्रत्येक क्रिया पद्धति में एक नयापन आता है। हिमाचल प्रदेश के अधिकांश आंचलों में चैत्र मास के आते ही अपने सगे सम्बन्धियों और मित्रों को मिष्ठान तथा कपड़े नववर्ष के उपहार स्वरूप बांटे जाते हैं। चैत्र की संक्रान्ति को गुड़ का गुड़ाणी खाना शुभ माना जाता है। वर्षभर लगने वाले मेलों का प्रारम्भ भी चैत्र मास से ही होता है। परम्परा के अनुसार अपने मुख से चैत्र मास का नाम लेना शुभ नहीं माना जाता, बल्कि इस मास में गाये जाने वाले लोकगीतों को गाने वाले पारम्परिक गायकों द्वारा सुनना ही शुभ माना जाता है। ये गायक चैत्र मास की संक्रान्ति से ही लोगों के घर-घर जाकर चैत्र के गीत गाते हैं। जिसके बदले में लोग इन्हें कपड़े, बर्तन तथा रुपये आदि उपहार में देते हैं।

चैत्र की संक्रान्ति को **'जेठा विरशू'** कहते हैं। जो देवता फाल्गुन की संक्रान्ति को स्वर्ग से वापस नहीं लौटते वे चैत्र की संक्रान्ति को वापस आते हैं। इन देवताओं के मन्दिरों के कपाट चैत्र संक्रान्ति को ही खोले जाते हैं। देवता के रथ को सजाया जाता है और मन्दिर के बाहर सौह (प्रांगण) में थड़े पर बिठाया जाता है। तत्पश्चात् देवता का गूर देवता की भार्था (कथा वृत्तान्त) सुनाता है तथा लोगों को आशीष देता है। चैत्र संक्रान्ति को मन्दिर के चारो ओर मशालें जलाकर परिक्रमा भी की जाती है। देवता की पिंडी का पूजन होता है तथा हवन यज्ञ किया जाता है।

कुल्लू जनपद के रूपी क्षेत्र में चैत्र की संक्रान्ति से कन्याएं सांझ होते ही भोजन आदि करके देव मन्दिर में इकट्ठा होती हैं। मन्दिर की परोल के पास देव स्तुति में श्रानी गीतों को गाती हैं। ये गीत प्रथम चैत्र को आरम्भ होकर पूरे मास गाये जाते हैं। स्तुति गीत गाने के बाद वे देव प्रांगण में विशेष प्रकार के लालहड़ी नामक गीत गाती व नाचती हैं। श्रानी गीतों को गाने की एक बानगी इस प्रकार हैं–

पाणी रै बुम्बलुआ लोड़ी लोड़ी खीलो।
नीली चीठी घोड़ी रै नीले चीठे फूलो।।
हौरी पीऊंली घोड़ी रै हौरै पीऊंलै फूलो।
शेती ऐ घोड़ी रै शेतै फूलो।

चैत्र के आते ही बसन्त अपनी छटा बिखेरनी शुरु करती है। चारों ओर फूल ही फूल खिलते हैं। हरे, पीले, नीले, सफेद फूलों से पूरी प्रकृति सरावोर हो जाती है, यही भावाभिव्यक्ति इस गीत में

प्रकट होती है। निरमण्ड गांव में चैत्र मास की संक्रान्ति से हेसी लोग फलालु गाते हैं। चैत्र की संक्रान्ति को ही जोगनियों की पूजा की जाती है। दूव घास की पूजा कर स्तुति की जाती है।

आओ बाशेय म्हारे फूला केरे मातो।
फूले छाडिये लागी कीजू केरे पाला बालुआ।
कीजू केरे बाह्मण जाता होआ फूला डाली लागेगा।
डयोड़ केरे पाला बालुआ।

चैत्र मास में जो जो फूल खिलते हैं उन्हें सभी वर्गों में बांटकर भ्रातृभाव को बढ़ावा दिया जाता है। चैत्र की संक्रान्ति को बहुत से देवी-देवताओं के अवतरण होने का दिन भी होता है। वीरनाथ अर्थात् गौहरी देवता का जन्म दिन चैत्र संक्रान्ति को मनाया जाता है। इस दिन पूरे गाजे-बाजे के साथ देवता के प्रथम आवाहन का आयोजन होता है। देवता गूर के माध्यम से अपने प्रकट होने की कथा सुनाता है। जौ से उगाये हुए पीले **जौरे** का पूजन कर चारों दिशाओं में बिखेरा जाता है। सभी देवलु अपनी टोपी अथवा अपने शरीर के श्रेष्ठ स्थान पर इन जौ की पीली पतियों को धारण करते हैं। इन दिन स्त्रियां **त्रासा** नृत्य का श्रीगणेश भी करती है। सांझ ढलने पर देवता का जगराता किया जाता है। गांव के सभी परिवारों से लकड़ी का एक-एक ठेला सौह में इकट्ठा करके जलाया जाता है। सभी घरों में मीठे 'गीचे' तथा 'गुड़ला' बनाया जाता है। रात को ही देवता मनाने की प्रक्रिया होती है। देवता मनाने में १८ झुणा अर्थात् अठारह प्रकार से बजन्तिरयों द्वारा देवता के साथ पूजा में देवधुन बजाई जाती है। गूर, पुजारी, कारदार तथा बजन्तरी रात भर देव मन्दिर में ही गुजारते हैं। रात खुलने से पहले ढौंउसी, ढौंउस लेकर, भाणा बजाने वाला भाणा लेकर तथा पुजारी जलती हुई मशाल लेकर मन्दिर की परिक्रमा करते हैं जिसे 'दी फेरना' कहते हैं। प्रातः सभी श्रद्धालु जागरे से बनी राख से अपने माथे पर तिलक लगाते हैं। तिलक लगाना शुभ माना जाता है। दिन को देवता का रथ बाजे-गाजे के साथ पूरे गांव में हर घर के खलियान में धूप पीने हेतु जाता है।

शाम को देवता के मन्दिर से सभी निशान बाहर निकाले जाते हैं। फिर गूर देउखेल करता है। गूर हाथ में भेखल की टहनी लेकर गांव के बाहर एक निश्चित स्थान पर उसे रख कर गांव को वापस लौटता है। इससे वर्ष भर अनिष्ट शक्तियों का शमन होता है।

नया सम्वत्

यह दिन हिमाचल ही नहीं अपितु पूरे हिन्दू समाज में पुण्य दिवस के तौर पर मनाया जाता है। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ब्रह्मा जी ने सृष्टि का प्रारम्भ किया था तथा यही संवत्सर का आरम्भ का दिन है। अतः इस दिन सर्वप्रथम ब्रह्मा जी का और तदनन्तर अन्य देव, दानव, ग्रह नक्षत्र, ऋषि मुनि, पञ्च देव, पञ्च महाभूत, दशदिक् पाल, सुख-दुःख, रोग-दोष और उनके प्रशामक ओषधोपचारादि का पूजन किया जाता है और प्रवर्तमान वर्ष सब के लिए सुख शान्तिदायी होने की प्रार्थना की जाती है। सृष्टि सम्वत्, कलि सम्वत्, विक्रमी एवं शक आदि सभी भारतीय संवतों का वर्ष क्रम इसी दिन

परिवर्तित होता है। जैसे इस बार नव संवत्सर विक्रमी संवत् चैत्र सौर मास के २६ प्रविष्टे को कल्प संवत् १९७२९४९११८, सृष्टि संवत् १९५५८८५११८, कलि संवत् (कलियुगाब्द) ५११८, विक्रमी संवत् २०७३, शक् संवत् १९३८ का शुभारम्भ ८ अप्रैल, २०१६ से है। हिमाचल के समस्त अंचलों में भी वर्ष प्रतिपदा को नव वर्ष के रूप में मनाया जाता है। इसे यहां पर नया सम्वत् 'नोउआं साजा', 'गुड़ला साज़ा', 'कनाउआ साज़ा' आदि नामों से पुकारा जाता है। नये सम्वत को 'शुड़कू साज़ा' भी कहते हैं। इसे बारह मास की संक्रान्ति के अतिरिक्त तेरहवां साजा (संक्रान्ति) कहा जाता है, क्योंकि इसको मिलकर तेरह साजे हो जाते हैं। इस दिन भोर होने से पूर्व ही मीठा खाने की परम्परा है। जन विश्वास है कि यह दिन जैसा गुजरेगा वैसा ही पूरा वर्ष व्यतीत होगा। अतः इस दिन शराब, लुगड़ी, सूर, मांस आदि पदार्थों का सेवन करने से बचने की कोशिश की जाती है। लड़ाई-झगड़ों से बचने का पूरा प्रयास रहता है। घर की गृहणी भोर होने से पूर्व उठ कर 'गुड़' को परिवार के सभी सदस्यों को खिलाती है। यदि बच्चे सोए हुए हों तो उनके मुंह में सोए हुए ही गुड़ डाली जाती है। लोगों का विश्वास है कि यह दिन मीठा गुजरे अर्थात् मधुरता से सुख पूर्वक व्यतीत हो। यह दिन अच्छा गुजरने से पूरा वर्ष शुभ गुजरता है। गुड़ का सेवन के कारण ही उसे 'गुड़ला साज़ा' भी कहते हैं। समस्त परिवर को गुड़ खिलाने के बाद गृहणी गुड़ में पानी डाल कर गड़ाणी बनाती है। कभी-कभी इसमें घी भी डाला जाता है। सबके उठने पर इस गड़ाणी को पिलाया जाता है। प्रातः के भोजन में मीठा चावल बनाया जाता है। कहीं-कहीं आटे के चिलडू भी बनाये जाते हैं जिन्हें गुड़ के गुड़ाणी के साथ खाया जाता है। चिलड़े बनाने के लिए आटे का पतला घोल बनाया जाता है। उसे अच्छी तरह फेंट कर तवे के ऊपर पकाया जाता है। पूरे दिन मीठे चावल, गड़ाणी तथा चिलडू को आस पड़ोस में रहने वालों तथा सम्बन्धियों में भी बांटा जाता है।

धूप निकलने पर कुल पुरोहित अपने यजमानों के घर जाता है और उन्हें अगले वर्ष होने वाली घटनाओं की पत्री पढ़कर सुनाता है। पत्री में वर्णन रहता है कि आने वाले वर्ष का कौन राजा होगा? कौन मन्त्री होगा? वर्ष का क्या नाम होगा? इनके राजा और मन्त्री होने से ग्रहों पर क्या-क्या प्रभाव पड़ेगा? अन्न धन की क्या स्थिति रहेगी? वर्षा कितनी होगी? सूखा पड़ेगा, भूकम्प आएगा या बाढ़ आएगी? हारी बीमारी की क्या स्थिति होगी? राज दरबार या राज सरकार में क्या स्थिति होगी? इसी के साथ-साथ १२ राशियों की लाभ-हानि की स्थिति भी बताई जाती है। शुभ-अशुभ स्थितियों को पत्री में लेने देने की मात्रा से दर्शाया जाता है। जैसे कुम्भ राशि को ११ लेने, २ देने, मीन राशि को ६लेने २ देने इत्यादि से बताया जाता है। लेने का अर्थ आय व देने का अर्थ व्यय होता है।पत्री सुनने के बाद सभी परिवार के लोग अपनी ग्रह दशा के बारे में ब्राह्मण से पूछताछ करते हैं। पत्री सुनाने के लिए ब्राह्मण को घर वाले अन्न की टोकरी दान के रूप में देते हैं।

नये संवत्सर को देवी-देवताओं के मन्दिर में भी देव पुरोहित पत्री सुनाता है। पुरोहित के आने

से पूर्व मन्दिरों में पूजा की जाती है। उसके आने पर गूर जगती पर बैठता है। फिर देवता की तरफ से पुजारी पुरोहित को पगड़ी देता है जिसे उसके सिर पर बांधा जाता है। पगड़ी पहनने के बाद पुजारी गूर के हाथ से पकड़ी घण्टी में कुछ गुड़ व चावल डालता है। तब गूर उस चावल व गुड़ को पुरोहित को उसके द्वारा तैयार किये गए वर्षफल (पत्री) के ऊपर दक्षिणा स्वरूप देता है। दक्षिणा ग्रहण करने के बाद पुरोहित वर्षफल सुनाना शुरु करता है जिसे देवता सहित सभी उपस्थित लोग उसका मनोयोग से श्रवण करते हैं। पत्री सुनाने के बाद लोग गूर से आने वाले वर्ष के बारे में बारी-बारी से पूछ डालते हैं। जब सब निवृत होते हैं तब गूर प्रजा की भलाई हेतु आशीर्वचन देता है। दिन को देवता द्वारा गांव में परिक्रमा भी की जाती है। कई देवताओं के मन्दिरों में इस दिन हवन भी किया जाता है और कई देवता घर-घर में धूप पीने जाते हैं। जहां सभी लोग देवता को धूप, फूल और चावल से पूजा कर केसर (भेंट) देते हैं व आशीर्वाद के रूप में फूल प्राप्त करते हैं। कई स्थानों पर नए साजे को मनाने की प्रक्रिया पूर्व संध्या से ही शुरु हो जाती है। रात को ही मीठे बबरू बनाये जाते हैं जो सुबह सूरज निकलने से पहले गुड़ के साथ खाए जाते हैं। शिमला के जुब्बल क्षेत्र में घुण्डा नाग के यहां नये सम्वत् की पूर्व संध्या को पास के जंगल से एक बड़ई वृक्ष देव मन्दिर के लिए लाते हैं जिसे नये साजे को फूलों से सजाकर मन्दिर के दाईं तरफ खड़ा किया जाता है।

नव वर्ष के दिन मधुमक्खी की 'मुहाटी' को साफ सुथरा किया जाता है। मुहाटी हर घर में दीवार में बनाई जाती है, जो एक लकड़ी की बनाई हुई पेटिका होती है, जिसे घर की दीवारों में चिना जाता है। बाहर की ओर ढक्कन में एक छेद रखा होता है जिससे मधुमक्खियां अन्दर-बाहर आती जाती है। अन्दर की ओर एक ढक्कन मिट्टी गोवर से लीप कर अस्थायी रूप से लगाया जाता है। नया सम्वत् चैत्र में होता है। इसके बाद वैसाख या ज्येष्ठ मास में मधुमक्खियों का झुण्ड से बंटवारा होता है। बंटवारे से अलग हुआ झुण्ड अपने पुराने घर से निकलता है और नये घर अर्थात् साफ सुथरी मुहाटियों में डेरा डालता है। लोग इस दिन ही ब्राह्मण से मधुमक्खियों के साथ उनकी राशि मिलाने का अनुरोध करते हैं और 'माहूं री भरण' का दिन भी निश्चित करने को कहते हैं। माहूं री भरण वाले दिन खेतों से डंठल के साथ लाये सरसों के फूलों को मुहाटी के अन्दर चिपकाया जाता है और देवता से कामना की जाती है कि उसके 'मढाम' (मधुमक्खी पेटिका) में मधुमक्खियां आ जायें। नया सम्वत् के दिन ही ब्राह्मण खरीफ व रवि की दोनों फसलों के बीजने का दिन भी पञ्चांग देखकर निश्चित करता है। नया सम्वत् के दिन बहुत से देवताओं के यहां मेलों का आयोजन भी होता है। कुल्लू में शमसी की देवी सोमसी (श्यामाकाली) के मन्दिर में विरशू का मेला लगता है जिसमें महिलाएं विरशू का नृत्य करती है। यहां इस दिन से विरशू नृत्य को शुरु करने की परम्परा है जो ज्येष्ठ संक्रान्ति तक रहती है। भीतरी सराज कुल्लू के गांव कोटला में नया संवत् के दिन देवता छमाहूं का एक बड़ा मेला लगता है जिसे 'देऊ ओसणी' का मेला कहते हैं। ओसण का अर्थ है उतरना। कहते हैं कि यह देवता पौष

संक्रान्ति को स्वर्ग जाता है व नये सम्वत् को भूलोक वापस लौटता है। इस दिन देवता के रथ को सवांरा जाता है। इसमें तोतला देवी का मोहरा भी रथ में सजाया जाता है। रथ श्रृंगारने के बाद देवता को कोटला से चवाली की जोगनियों के पास ले जाया जाता है। जहां देवता जोगनियों से मेल मिलाप करता है।

संगीत प्राध्यापक,
राजकीय महाविद्यालय,
कुल्लू - १७५१०१ (हि.प्र.)

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बंधित विवरण
फार्म - ४ (नियम ८ देखिए)

१. प्रकाशन स्थल	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी
२. प्रकाशन तिथि	:	अप्रैल, जुलाई, अक्तूबर, जनवरी माह का प्रथम सप्ताह
३. मुद्रक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
४. प्रकाशक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
५. सम्पादक का नाम	:	डॉ० विद्या चन्द ठाकुर
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
६. उन व्यक्तियों के नाम व पत्ते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के सांझेदार या हिस्सेदार हों।	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।

मैं चेतराम प्रकाशक एवं मुद्रक इतिहास दिवाकर एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गए विवरण सत्य है।

हस्ता/-
चेतराम
प्रकाशक
दिनांक ३१ मार्च, २०१६

नये संवत् में जौ की फसल का जौ-लाई त्यौहार

तोबदन

जौ किसी समय हिमाचल प्रदेश के पूरे क्षेत्र में एक प्रमुख फसल के रूप में बोया जाता रहा है। प्रदेश के अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में इसकी किस्म भिन्न होती है। यहां यह बिना छिलके के होने के कारण नंगा जौ कहलाता है।

जौ हमारे भोजन का महत्त्वपूर्ण तत्व रहा है। यह पौष्टिक है। यह अलग बात है कि आज कोई भी व्यक्ति जौ से निर्मित किसी भी खाद्य वस्तु को चखने से भी कुछ हिचकिचाएगा। जौ को भूनने के बाद उसको पीसकर सत्तु बनाते हैं। जिससे फिर अलग-अलग पकवान बनाए जा सकते हैं। बिना भुने जौ के आटे का चिल्लड़ा बनता है। हमारी प्राचीन संस्कृति में जौ के महत्व का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि इससे सम्बन्धित कई परम्पराएं अब भी जीवित हैं और उनका स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये धार्मिक व सामाजिक सभी प्रकार की परम्पराओं से सम्बन्धित हैं। मुख्यतः इसके आटे का चिल्लड़ा बनाकर और इसको भून कर सत्तू बना कर खाते थे। लगभग ४०-५० साल पहले तक इसका प्रयोग बहुत होता था।

इसका एक प्रयोग और है। हिमाचल प्रदेश पहाड़ी क्षेत्र होने और सर्दियों में अधिक ठंडा होने के कारण यहां इन दिनों ताजा फूल प्राप्त करना कठिन होता है। लेकिन अधिकतर त्यौहार भी इन्हीं दिनों में होते हैं और त्यौहारों में फूलों का प्रयोग भी आवश्यक है। इस उद्देश्य से लाहुल में जंगली अथवा घर में उगाए हुए फूल सूखा कर रखे जाते हैं। कुल्लू में दूब न मिलने पर इसका प्रयोग किया जाता है। परन्तु अन्वेषण परक व उत्सव प्रेमी हमारे पूर्वजों ने इसका अच्छा और आसान स्थानापन्न खोज निकाला है। जौ की पनीरी का फूल के रूप में प्रयोग करने की प्रथा पूरे प्रदेश में प्राचीन काल से प्रचलित रही है। विशेष रूप से प्रदेश के अधिक ऊंचे इलाकों में इसका प्रयोग अधिक लोकप्रिय रहा है। यह पवित्र भी माना जाता है। लाहौल में इसे **यवराग** कहते हैं और कुल्लू में पुराने समय में यह **जौरे** नाम से जाना जाता था।

इसको बनाने की विधि इस प्रकार है। जब फूल की आवश्यकता हो उससे दो सप्ताह पहले जौ के बीज को एक वर्तन में बोया जाता है। बीज फूट जाने और मिट्टी से बाहर आ जाने के पश्चात् इसे भीतर कमरे में अंधेरे में रखा जाता है और आवश्यकतानुसार पानी डालते रहते हैं। जब ये पीले रंग के कोमल व मोहक धान की डाली के रंग के हो जाते हैं। तब इन्हें आठ दस पतियों के गुच्छों में फूल के रूप में प्रयोग करते हैं। कुल्लू में सर्दियों में फागली के त्यौहार में इसका खूब प्रयोग होता है। इसको उगाने के लिए पवित्र अनुष्ठान किए जाते हैं। लाहुल में लोसर और फागली में इसी प्रकार प्रयोग करते

हैं। लोग इसे आदर से देवताओं को चढ़ाते हैं और किसी शुभ कार्य में आमन्त्रित अतिथियों अपने पड़ोसियों और रिश्तेदारों को भेंट करते हें। अपनी टोपी में और अपने कोट की जेब में छाती पर और शौक और शान से पहनते हैं। महिलाएं इसे कान के ऊपर लगा कर सजती हैं।

कुल्लू के दुर्गम और अलग रस्मोरिवाज वाले गांव मलाणा में भी इसका ऐसा ही महत्व है। यह गांव बड़ा देऊ जमलू का क्षेत्र है। उनके सम्मान में फागली का बड़ा मेला मनाया जाता है जिसमें जौ की पनीरियों को लोग पुष्प के रूप में देवता को तथा आपस में एक दूसरे को भेंट करते हैं। यहां इसे पहले **जरी** नाम से जाना जाता था। प्रतीत होता है कि पार्वती नदी के साथ मलाणा नाला के मिलन स्थल पर स्थित जरी गांव के नाम का उद्भव भी इसी शब्द से जुड़ा है। आजकल यह शब्द प्रयोग में नहीं दिखाई देता है।

तीव्र गति से परिवर्तित होते समय के झौंके से कोई भी नहीं बच पाया है, लेकिन कुल्लू ज़िला की सैंज घाटी के धाऊणी गांव में जौ से सम्बन्धित एक प्राचीन सुदृढ़ परम्परा का आज भी प्रचलन है। सांस्कृतिक दृष्टि से यह गांव बहुत समृद्ध है। यहां के कलात्मक मन्दिर प्राचीन संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं। गांव के किनारे पानी के चश्मे के पास कुछ पत्थर के स्लेट खड़े करके रखे हुए हैं। इन्हें पीढ़ी कहते हैं। इनके सम्बन्ध में बताया गया कि देवता के गूर (चेला) की मृत्यु पर उनके स्मारक चिह्न के रूप में ये स्लेट खड़े किए जाते हैं। इस सांस्कृतिक धाऊगी गांव में प्रति वर्ष ज्येष्ठ (जेठ) महीने में जौ से सम्बन्धित त्यौहार मनाया जाता है जिसे जौ लाई कहते हैं। लेखक को सन् २००६ में इस त्यौहार को देखने का अवसर प्राप्त हुआ। यह त्यौहार ८ जून को था। उस दिन जेठ महीने की २६ प्रविष्टे थी। इस त्यौहार का दिन निश्चित नहीं होता। प्रतिवर्ष देवता नारायण द्वारा दिन नियत किया जाता है। उस वर्ष यह त्यौहार काफी देर से मनाया जा रहा था। इसीलिए तब तक रवी की जौ आदि सभी फसलें कट चुकी थी।

२६ जेठ के त्यौहार में दोपहर के समय सभी गांव वालों और आगन्तुकों को सामूहिक रूप से भोजन कराया गया। इस व्यवस्था की जिम्मेवारी गांव के कुछ ही परिवारों की है जो प्रत्येक वर्ष बारी-बारी से निभाते हैं। उसके पश्चात् शाम चार और पांच बजे के बीच गांव के देवता का रथ खेत की ओर निकलता है। देवता पूरी तरह सुसज्जित होता है। देवता के बाजे वाले तथा सभी देव निशान-सामान उठाने वाले व अन्य गांव वाले साथ होते हैं। गांव से लगभग आधा किलोमीटर दूर देवता का खेत है जिसमें जौ की फसल खड़ी है।

वैसे रवी की सभी फसलें इलाके में कट चुकी हैं और अमुक खेत में भी कट चुकी है। परन्तु लगभग चार वर्ग मीटर के क्षेत्र में फसल विशेष रूप से खड़ी छोड़ी गई है। देवता यहां आकर सभी गांव वालों के सम्मुख नाचता है। फिर वह कई बार उस खड़ी फसल पर झुकता है। कुछ समय के पश्चात् फसल काटने की अनुमति मिल जाती है। तब वहां पहले से खड़ी हाथ में दराती लिए छः सात महिलाएं जौ काटना आरम्भ कर देती हैं। कुछ महिलाएं पूलें अथवा (छोटे-छोटे गट्ठे) बनाना आरम्भ करती है।

एक पुरुष उनसे बोझा बनाता है। फिर वह उस बोझे को पीठ पर उठाकर देवता के निकट खड़े होकर नाचता है। यह दृश्य अत्यन्त आकर्षक होता है। फिर अंधेरा होने से पहले देवता तथा सभी गांव वाले गांव वापिस आ जाते हैं।

हिमाचल प्रदेश में प्रायः यह परम्परा थी कि फसल बोने और काटने का काम आरम्भ करने से पहले कुछ अनुष्ठान होते थे। काम शुरु करने का दिन निश्चित किया जाता था। तब सामूहिक रूप से काम शुरु होता था। एक समय में पूरे गांव में प्रायः एक ही प्रकार का काम होता था। कोई भी परिवार अपनी इच्छा से अकेले न तो फसल बो सकता था और न ही काट सकता था। इस अनुष्ठान के पश्चात ही यह काम हो सकता था। इस नियम का उल्लंघन कोई नहीं करता था। नियमतः सबको एक साथ चलना होता था। वास्तव में यह जौ-लाई का त्यौहार नये संवत् (साल) में फसल कटाई आरम्भ करने का त्यौहार रहा है।

परम्परा के अनुरूप बताया जाता है कि धाऊगी में पहले पहल यह त्यौहार दूमच परिवार से आरम्भ हुआ था। दूमच ताकतवर था और पहले उसका यहां आधिपत्य था। शायद वह यहां का शासक था। उसको देवता नारायण जो वर्तमान में इस गांव के देवता है, ने परास्त किया। उसका वंश नहीं रहा। उसकी सम्पति का अधिकार शांगचूल को मिला जो रामपुर बुशैहर से आया था। उसका परिवार भी समाप्त हो गया। उनकी सम्पति मधेउलू परिवार को मिली। मधेउलू परिवार के लोगों की ही इस त्यौहार मैं आज भी मुख्य भूमिका रहती है।

आज कल इस उत्सव में दिन का एक समय का भोजन गांव वालों और आंगतुकों को कराया जाता है जिसमें भात और कई प्रकार के दाल व सब्जियां परोसी जाती हैं। इससे पहले जौ के आटे का चिल्लड़ा तथा साथ में लस्सी और झोल खिलाने की परम्परा थी। किसी समय सिड्डू और शहद भी खिलाया जाता था।

अन्यत्र की भान्ति धाऊगी गांव में भी सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा सामाजिक क्रम में परिवर्तन आया है। तब भी यहां के समाज ने अपनी प्राचीन पम्परा का उन्मूलन नहीं होने दिया है तथा नवीन परिस्थितियों से जोड़ते हुए अपनी समृद्ध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परम्परा को सुदृढ़ता से सुरक्षित रखा है। यह सामाजिक विकास के साथ सांस्कृतिक संरक्षण की एक स्वस्थ प्रवृति का द्योतक है।

मियांबेहड़, ढालपुर,
पोस्ट बॉक्स न. - २४,
जिला कुल्लू - १७५१०१ (हि.प्र.)

नया सम्वत् में ढोलरू गायन

चंचल कुमार

हिमाचल प्रदेश, पंजाब और जम्मू के अधिकांश क्षेत्रों में नया सम्वत् के अवसर पर ढोलरू गायन की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। हालांकि भारतीय सनातन परम्परा में नया सम्वत् का आरम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को होता है, लेकिन लोक परम्परा में नये सम्वत् के मंगलगान ढोलरू का गायन चैत्र मास की संक्रान्ति से ही आरम्भ हो जाता है। यह मंगल गान अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग समय अवधि में पूरे चैत्र मास में चलता रहता है। लोग प्रायः चैत्र मास का नाम ढोलरू के मंगल गायन के माध्यम से सुनने के बाद ही अपने मुख से उच्चारित करते हैं। यहां हिमाचल प्रदेश के चम्बा जनपद में प्रचलित चैती मंगलगान ढोलरू की परम्परा का पूरा विवरण दिया जा रहा है।

नया सम्वत् के ढोलरू गायन की परम्परा चम्बा में भी शताब्दियों से चली आ रही है। ढोलरू गायन द्वारा नए साल की बधाई देने की यह अनूठी परम्परा, चैत्र मास की संक्रान्ति से शुरू होकर मुख्य रूप से केवल आठ दिन तक चलती है। यह ढोलरू गायन केवल एक ही समुदाय 'महासा' द्वारा चैत्र मास में ही किया जाता है। चैत्र मास का नाम इस महासा समुदाय के मुख से ही सुनना शुभ माना जाता है।

ढोलरू गायन के लिए केवल दो कलाकार ही होते हैं। एक गीत गाता है और दूसरा ढोल पर ताल बजाने के साथ-साथ गाने में भी साथ देता है। ढोलरू गायन शुरू करने से पहले ढोल की पूजा की जाती है। अतः ढोल पूजा से ही ढोलरू शब्द की उत्पत्ति सम्भव लगती है।

ढोलरू गायन की परम्परा कब शुरू हुई और इसे केवल एक ही समुदाय के लोग 'महासा' ही क्यों गाते हैं? इसके बारे में जनश्रुति है कि देवों के देव महादेव शंकर भगवान ने गौरा माता की सेवा एवं रखवाली के लिए भस्मीदन्त की रचना की थी। भस्मीदन्त गौरा माता की सुन्दरता पर मोहित हो गया और गौरा को पाने के लिए शंकर भगवान् की ही जान का दुश्मन बन गया। उसके पास शंकर के वरदान से प्राप्त ऐसा कड़ा था जो जिसके सिर पर आए, वह भस्म हो जाता था। भस्मीदन्त इसका प्रयोग शंकर भगवान पर ही करने लगा। शंकर भगवान को अपनी जान की रक्षा करने के लिए भागकर छिपना पड़ा। कहते है कि इस संकट की घड़ी में श्री हरि विष्णु भगवान को भस्मीदन्त की जीवन लीला समाप्त करने के लिए स्वयं गौरा जैसा मनमोहिनी रूप धारण करना पड़ा। जब विष्णु भगवान् ने मनमोहिनी रूप धारण किया जो उस समय अपने दाहिने बाजू की मैल से एक 'महाशय' को

ढोल सहित प्रकट किया। उस महाशय ने ढोल की ताल के साथ गीत शुरू किया और उससे गौरा रूपी विष्णु भगवान नृत्य करके भस्मीदन्त की रिझाने लगे। वहां महाशय के गीत संगीत का ऐसा जादू हुआ कि भस्मीदन्त भी गौरा की तरह नकल करके नाचने लगा। गौरा अपना दाहिना बाजू सिर पर रखकर नाचने लगी तो भस्मीदन्त ने भी अपना दाहिना बाजू, जिसमें शिव जी से वरदान प्राप्त किया हुआ कड़ा पहना था, को सिर पर रखकर नाचने लगा। गौरा को इसी मौके का इन्तजार था। बस फिर क्या था। गौरा यानी विष्णु भगवान ने कहा, 'भस्म' और जीवन लीला भस्मीदन्त की समाप्ति हुई। शंकर भगवान् और विष्णु भगवान और गौरा माता ने उस महाशय को आशीर्वाद दिया।

जनश्रुति है कि विष्णु भगवान ने उस समय उस महाशय को दो वर दिए थे। एक वर में उसे बांस की कला का कौशल प्रदान किया और दूसरा वर चैत्र मास में आठ दिन अपने गीत संगीत द्वारा लोगों को घर-घर जाकर नए साल की बधाई देना। चैत्र मास का नाम लोग पहले-पहल उनके मुख से ही सुनेंगे। लोग श्रद्धा से उनके मुंह से चैत्र मास का नाम सुनकर और नए साल की बधाई पाकर उन्हें अन्न धन वस्त्र भेंट करेंगे। उल्लेखनीय है कि 'महाशय' शब्द ही लोकभाषा में 'महासा' हो गया है।

यह भी दन्तकथा है कि जब श्री हरि विष्णु भगवान् ने राम अवतार लिया तो उनके विवाह के समय 'महासा' ने ढोलरू गायन द्वारा बधाई दी थी। तब से नये वर्ष आने पर चैत्र मास में सबसे पहला ढोलरू भगवान रामचन्द्र को बधाई के रूप में सुनाया जाता था और फिर अयोध्या के घर-घर जाकर नए साल की बधाई के रूप में इसका गायन हुआ था।

चम्बा में ढोलरू लोक गाथा का गायन चैत्र मास की संक्रान्ति को शुरु होता है। सबसे पहले नए साल की बधाई ढोलरू गायन के द्वारा भगवान् विष्णु जी को दी जाती है। चैत्र मास की संक्रान्ति को प्रातः ढोलरू गायक विष्णु भगवान् के मन्दिर में जाते हैं। पुजारी उन ढोलरू गाने वाले दोनों कलाकारों को आदर के साथ आसन विछाकर बिठाता है। पूजा व भेंट के लिए माष की दाल, चावल, मक्की, मुड़, घी, रोलियां, टिक्का, कच्चा लाल धागा (मौली), नए कपड़े आदि सामग्री देता है।

सबसे पहले धूप जलाकर, ढोल को टीका लगाया जाता है फिर नया कपड़ा ढोल पर चढ़ाकर मौली धागे से ढोल को बीच से बांध दिया जाता है। फिर ढोलरू गायकों को टीका लगाकर नए वस्त्र दिए जाते हैं। उनके आगे श्रद्धानुसार माष की दाल, चावल, घी, गुड़, मक्की और पैसे रखे जाते हैं। गायकों के बाएं हाथ में मौली (लाल धागा) बांध दी जाती है। इसके बाद वह गायक भगवान विष्णु का मन में स्मरण करके सबसे पहला ढोलरू गीत 'पैहला ता नां लेईये नारैण दा' इस प्रकार गाते हैं –

पैहला ता नां लेइये नारैण दा, हां पैहला ता,
जिनी सारी सरिस्टी बणाई न, हां पैहला ता।

पहला नाम उस नारायण भगवान का लेना चाहिए जिनके द्वारा सारी सृष्टि की रचना हुई है।

दुज्जा ता नां लेइये माई-बाप दा न, हां दुज्जा ता,

जिनी जम्मी दस्सेया संसारा न, हां दुज्जा ता।

दूसरा नाम माता-पिता का लेना चाहिए, जिन्होंने हमें जन्म देकर संसार दिखाया है।

त्रीया ता नां लेइये गुरु अपणे दा न, हां त्रीया ता
जिनी सारी विद्या पढ़ाई न, हां त्रीया ता

तीसरा नाम अपने गुरु का लेना है जिनकी कृपा से हमने सारी विद्या पढ़ी है।

चौथा ता नां लेइये धौले बैल दा न, हां चौथा ता,
जिनी थम्मे धरणी दे भारे न, हां चौथा ता।

चौथा नाम उस धवल बैल का लेना जिसने सारी पृथ्वी का भार उठा रखा है।

पंजमा ता नां लेइये पंज पंडबा दा, हां पंजमां ता
जिन्हां भाईयां धर्म कमाया न, हां पंजमां ता।

पांचवा नाम पांच पाण्डवों का लो जिन पांच भाईयों ने धर्म कमाया है।

भौंरा ता पूछैंदा उस भौरियां जो, हां भौंरा ता
डालीया रस कदु होणां न, हां भौरां ता।

भौंरा अपनी पत्नी भौंरी से पूछता है कि डाल (वनस्पतियां) रसपूर्ण कब होंगी।?

भाली ता लेया भौंरा पंजे सत्ते, हां भाली ता,
आई गेया चैत्र महीना न, हां भाली ता।

भंवरी कहती है आप पांच सात दिन इन्तजार करो, चैत्र मास तो आ ही गया, तब सब इस से भरपूर होंगे।

सिया ता पुछैंदी गौरजा माई जो, हां सिया ता
सिवा केहर कुण बेड़ा होगा न, हां सिया ता।

सीता गौरा से पूछती है कि शिव का महल कौन सा होगा?

सुन्नी ता परोली रामा रूपे थम्मे न हां सुन्नी ता,
सिवा केरा एइयो बेड़ा होगा न, हां सुन्नी ता

जिसका प्रवेश द्वार सोने का और खम्भे चांदी के होंगे, वह महल भगवान् शिव का होगा।

तुसी ता जियो भाईयो सुणदेयों हां तुसी ता
असां ता आए वरा दिया वारी हां तुसी ता।

आप सभी लम्बी आयु तक जी कर हमें सुनते रहें। हम साल बाद आपको बधाई देने आए हैं।

जुग जुग जियो तुसां भाईयां दिया जोड़िया हां जुग जुग
टाकुर रज्जी रजाओ हां तुसा न, जुग जुग

आप सभी युगों युगों तक जीवित रहें। भगवान् विष्णु तुम्हें सम्पूर्ण सुख समृद्धि दें।

असी ता आए हो भाईयो वरा देया हां असी ता
तुसी ता सुणेयो वो भाईयो जुगा-जुगा हो तुसी ता

हम साल बाद आपके द्वार आए हैं और आप यह भगवान् का नाम युगों -युगों तक सुनते रहें, यही हमारी कामना है।

भला तां हो बंदेया जीभा बोलणा, हां भला ता
करि लैणा हत्थे केरा दान, हां भला ता।

हे प्राणी अपनी जीभ से सदा अच्छा बोलना और अपने हाथों से श्रद्धा के साथ दान देना, यही कल्याण मार्ग है।

मत ता करे रामा मेरी-मेरी, हां मत ता
इक दिन भस्मा दी ढेरी हां, मत ता।

हे मनुष्य! तू क्यों कर रहा है मेरा-मेरा, तेरा कुछ भी नहीं है। सब कुछ राम का है। तेरा शरीर भी तेरा नहीं है, एक दिन जलकर राख की ढेरी हो जाएगा।

इस प्रकार प्रथम ढोलरू 'पैहला ता नां लेइए नारैण दा' हर घर में गाया जाता है।

दूसरी ढोलरू लोक गाथा 'कुल्ह' नाम से प्रचलित है। कुल्ह ढोलरू चम्बा की रानी के अमर बलिदान की गाथा है। चम्बा की रानी सुनयना ने पानी के लिए अपने आपको जिन्दा दफनाया था जिसकी याद में आज भी चम्बा में चैत्र महीने सूही मेला होता है। लोक भाषा में रानी सुनयना सूही नाम से प्रसिद्ध है। इस रानी की बलिदान की गाथा ढोलरू गायन में इस प्रकार है –

खड़ी ता उठ मेरी रौलण राणीए, होई जांदा भ्यागे दा वेला हां
खड़ी ता उठी मेरी चम्बे दी राणीए, होई जांदा न्हाणे दा वेला हां।

जनता के दुःख में रोती चम्बा की प्रिय रानी तू बिस्तर छोड़कर उठ प्रभात हो गया है। नहाने का समय हो गया है।

सेइयो सेइयो राणी वो महणुओ, छम-छम नैणे लगी रूणां हां
होर ता होर सब सौखी वो महणुओ, चम्बे मेरे पाणी औखी हां।

रानी छम-छम आंसू बहाते हुए रोती है और कहती है कि अन्य तो सब कुशल है, परन्तु मेरे चम्बा में पानी की बहुत ही मुश्किल है।

झीक्के देसे रे हुड्डे जे आए, राणीए हाजर सद्दाए हां
कुस कम्मे सद्दे वो राणीए, कै कम बणे हमारे हां।

निचले देश के मिस्त्री आए हैं, रानी ने आदेश दिया कि मेरे सामने उन्हें हाजिर किया जाया। वह मिस्त्री हाजिर हुए और रानी से कहा, क्या हुक्म है?

होर ता होर सब सौखी वो हुड्डेयो, चम्बे मेरे पाणी दी औखी हां
दुःखी मत हुंऐं मेरी चम्बे दिए राणीए, पाणी ता दिंगे बग्गाई हां।

बाकी तो सब कुशल है, परन्तु मेरे चम्बा में पानी की बहुत ही मुसीबत है। तो वे मिस्त्री कहते हैं कि चम्बा की लोकप्रिय रानी! तुम इतनी दुःखी मत हो, हम पानी ज़रूर यहां पहुंचा देंगे।

सेइयो सेइयो हुड्डे वो राणीए, कुल्ह मलूणा जो भेजे हां
पैहली फट मारी वो हुड्डेया, निकलेया धूड़ धुड़ैना हां।

वही मिस्त्री रानी ने कुल्ह मलूण नामक स्थान पर भेज दिए। जब उन्होंने कुदाल से पहला बार धरती पर मारा तो धूल ही धूल उड़ी।

दुज्जी फट मारी वो हुड्डेया, निकलेया चिक्कड़ चैहला हां
त्री जी फट वाही वा हुड्डेया, निकली धूड़ी दी मुंडी हां
मंगदी मनुखा दी मुंडी हां, हां मंगदी मनखा दी मुंड़ी हां

दूसरा वार धरती पर किया तो कीचड़ ही कीचड़ निकला और जब तीसरा वार धरती पर मारा तो मुंडी (सिर) निकली और मुंडी ने कहा कि इस स्थान में पानी तभी बहेगा जब कोई आदमी अपनी बलि दे।

सेइयो सेइयो हुड्डे वो महणुओ राणी का हाजर जे होए हां
त्रीजी फट वाई वो राणीए निकली धूड़ी दी मुंडी हां,
हां हां, मंगदी मनखा दी मुंडी हां।

वे मिस्त्री वापिस रानी के पास आए और कहा कि तीसरी बार जब धरती पर कुदाल मारा तो एक धूली की मूंडी निकली और उसने कहा कि बिना मनुष्य के बलिदान के पानी नहीं निकलेगा।

तां जे भेजणा राजा मैं अपना न्याए कुण भाई करगा हां
तां जे भेजणा घुंघरू बेटा राज खिल्ले पेई जाणे हां
तां जे भेजणी गुड्डी धिया, दिसा खिल्ली पेई जाणी हां।

इस पर रानी सोचने लगी कि यदि मैं अपने राजा को भेजूं तो न्याय कौन करेगा। यदि अपने बेटे को भेजूं तो हमारा राजवंश ही समाप्त हो जाएगा। यदि बेटी को भेजूं तो एक दूसरी दिशा (राज्य) का सम्बन्ध बनना है, वह भी समाप्त हो जाएगा।

सद्दे ता हिन कनेडू काहारा, पालकी कसणा जे लाई हां
सेइयो सेइयो राणी वो महणुओं, कुल्ह मलूणा जो जाए हां।

रानी ने कनेड़ गांव के कहार पालकी उठाने के लिए बुलाए और वह रानी लोगों की भलाई में कुल्ह मलूण नामक स्थान को पालकी पर बैठकर जाने लगी।

रोआ तो रोआ मत मेरेयो बच्चेयो कुल्ह पुजी घरे औणा हां
सेइयो सेइयो राणी वो महणुओ, कुल्ह मलूणा रेई जाई हां।

रानी के बच्चे रोने लगे। रानी उन्हें समझाती है कि तुम मेरे बच्चे मत रोओ। मैं कुल्ह की पूजा करके वापिस घर आऊंगी।

होर ता होर सब दबो वो महणुओ, पैरा जो मेरे मत दबदे हां
ईल्ली ता ईल्ली मेरी गुड्डीया धिया, मोचडू पहनणे होल्ले हां।

रानी अपने को मलूण नामक स्थान पर जिन्दा चिनवाकर बलिदान देती है। जब मिस्त्री उस के शरीर को दफनाने के लिए चिनाई कर रहे होते हैं तो रानी भावुकता में कहती है कि मेरा सब कुछ दबा देना लेकिन पांव मत दफनाना, शायद मेरी गुड्डी बेटी आएगी और पांव के जूते पहनेगी।

होर ता होर सब दबो वो महणुओं, जंग्घा जो मेरी मत दबदे हां
ईल्ली ता ईल्ली मेरी गुड्डीया बेटी, सोथणू पहनणे होल्ले हां।

बाकी सब कुछ दफना दो मगर मेरी टांगे मत दफनाना शायद मेरी गुड्डी बैटी मेरी सलवार पहनने के लिए आएगी।

होर ता होर सब दबो वो महणुओ, छाती जो मेरी मत दबदे हां
इल्ला ता इल्ला मेरा घुंघरू बेटा, मम्में ते पीणे होल्ले हां

बाकि सब कुछ दफन कर दो मगर मेरी छाती मत दफनाना। शायद मेरा घुंघरू बेटा आकर यहां दूध पीने के लिए मेरे स्तन ढूंढेगा।

होर ता होर सब दबो वो महणुओ, बीणी जो मेरी मत दबदे हां
ईल्ली ता ईल्ली मेरी गुड्डीया धीया, सर पहरणा होल्ला हां।

सब कुछ दफना देना पर मेरे सिर पर लगी चुटिया मत दफनाना। मेरी गुड्डी बेटी यहां जरूर आएगी मेरे बाल संवारेगी।

सेइयो सेइयो राणी वो महणुओ, छप्पी-छप्पी लगी जाणा हां
राणी से छप्पी लगी जाणा महणुओ, पानी से बग्गी लगा आणा हां।

रानी दफन से धीरे-धीरे आंखों से ओझल हो गई, रानी दफन हो गई और उनके अमर बलिदान के साथ उधर पानी की धारा भी बहने लगी।

तेरे से बच्चे वो राणी वत्ता मझं भालणा लगोरे हां
तुसी ता सब चली आए चुगांनओ, अम्मा ईधी आई किनी आई हां
असी ता अग्गे चली आए, औ आई जनसालू दी हल्ले हां।

रानी के बच्चे रास्ते में अपनी मां के आने का इन्तजार कर रहे थे। इतने में चौगान शहर के लोग आए और बच्चों ने उन्हें पूछा हमारी मां क्यों नही आई तो वे कहते हैं, तुम्हारी मां जनसाली (चम्बा का एक मुहल्ला) की टोली के साथ आ रही है।

सुणां ता सुणां मेरे जनसालुओ भाइयो, अम्मां से ईधी किना आई हां
असी ता आसी अग्गरे आए, आई सेहू भरमौरी दी टोली हां
सुणां ता सुणां मेरे भरमौरियो भाईयो, ईधी अम्मा किना आई हां।

जब जनसाली मुहल्ले की टोली से पूछा तो वे कहते हैं कि हम आगे आ गए हैं और तुम्हारी माता भरमौर की टोली के साथ है। वह भरमौर की टोली वालों से पूछते हैं कि हमारी माता क्यों नहीं आई है। उत्तर फिर टालमटोल में मिलता है।

सेइयो सेइयो बच्चे वा महणूओ
हट्टी से महलां जो आए हां।

और वे बच्चे लाचार होकर वापिस अपने महल में आ जाते हैं।

इस प्रकार लोक गाथा, ढोलरू में कई गाथाएं हैं जिनमें पैहला ता नां लेइये नारैण दा, कुल्ह, मरूआ, गद्दण, धोबण, कंढी आदि प्रसिद्ध हैं।

इस प्रकार चैत्र मास की संक्रान्ति से आठ दिन तक महासा लोग घर-घर ढोलरू गाकर चैत्र मास का नाम सुनाते हैं और नए साल की बधाई देते हैं। आठवें दिन शाम को ये अपने घर पहुंचते हैं तथा अपने सारे परिवार को बिठाकर उन्हें भी चैत्र मास का नाम और ढोलरू गीत सुनाते हैं। उसके बाद इकट्ठे बैठकर खाना खाते हैं। जो कपड़ा सर्वप्रथम भगवान विष्णु के मन्दिर में पुजारी ढोल पर

चढ़ाता है उस कपड़े को ढोल से उतारकर अपने ट्रंक या संदूक में सम्मानपूर्वक रखा जाता है। आठ दिन तो महासा समुदाय के लोग अन्य जातियों के घर जाकर ढोलरू गाते हैं और फिर नौंवे दिन से उनकी अपनी ही जाति के घर-घर जाकर ढोलरू गायन किया जाता है। यह गायन पूरे चैत्र मास में चलता है। जिसमें एक दूसरे रिश्तेदारों के घर जाकर ढोलरू सुनाने के साथ-साथ आठ दिन में कमाया अन्न धन व वस्त्र एक-दूसरे रिश्तेदारों को भेंट करते हैं। चैत्र मास के अन्त में अपने-अपने सगे सम्बन्धियों को घर बुलाकर भी धाम (प्रीतिभोज) का आयोजन होता है।

आजकल यह लोक संस्कृति एवं धार्मिक आस्था की अमूल्य धरोहर ढोलरू परम्परा नाम मात्र की ही रह गई है। जहां इस परम्परा को निभाने वाले संकोच कर रहे हैं वहीं लोगों में भी इस परम्परा के प्रति श्रद्धा एवं आस्था दिलों से हटती जा रही है। यदि समय रहते इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो कुछ वर्षों में ढोलरू गायन की परम्परा विलुप्त हो जाएगी। इसके संरक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है।

गांव व डा. सरौल,
ज़िला चम्बा -१७६३१० (हि.प्र.)

संवीक्षण

प्राचीनतम कालगणना की आधुनिकता और वैज्ञानिकता

डॉ. मुरली मनोहर जोशी

भारतीय पौराणिक साहित्य में श्रीमद्‌भागवत का महत्त्व सर्वविदित है। इस ग्रन्थ में कतिपय दार्शनिक एवं वैज्ञानिक अवबोधों को अन्य कथाओं के साथ-साथ, इस सुघड़ता से पिरोया गया है कि व्यास जी के कौशल के समक्ष नतमस्तक होना पड़ता है। एक ऐसा ही महत्त्वपूर्ण अवबोध है 'काल'। श्रीमद्‌भागवत पुराण में अनेक स्थलों पर इसके संबंध में दार्शनिक एवं वैज्ञानिक मीमांसा विस्तृत रूप में प्रस्तुत की गई है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि 'काल' जैसे जटिल तत्त्व के विषय में भी अनेक गुरु-गंभीर विचारों को इतने सरल एवं सरस ढंग से लिख दिया गया है कि सामान्य पाठक अथवा श्रोता कथापट के ताने-बाने में गुंथे उसके अद्‌भुत सौन्दर्य को उसी सहज रूप में ग्रहण करता चलता है मानो वह श्रीकृष्ण की लीला का ही आनंदामृतपान कर रहा हो। यद्यपि काल एवं उसके स्वरूप की दार्शनिक चर्चाओं के उल्लेख श्रीमद्‌भागवत में अनेक स्थलों पर किये गये हैं, तथापि दो प्रसंग ऐसे हैं जिनके द्वारा काल एवं पदार्थ के सूक्ष्म एवं महान रूप से संबंधित गंभीर जिज्ञासाएं की गई हैं। इस प्रसंगों के अवलोकन से यह भी विदित होता है कि पौराणिक ग्रन्थों में इन दोनों तत्त्वों की वैज्ञानिक अवधारणाएं कितने उच्च धरातल को स्पर्श करती है। आधुनिक वैज्ञानिक उपलब्धियों के आलोक में इनका मूल्यांकन संभवतः रोचक लगे।

श्रीमद्‌भागवत के द्वितीय स्कंध के आठवें अध्याय में राजा परीक्षित ने शुकदेव मुनि से विविध प्रश्न किय हैं। इस अध्याय के बारहवें एवं तेरहवें श्लोक में वे पूछते हैं कि महाकल्प एवं उनके अवांतर कल्प कितने होते हैं? भूत, भविष्य एवं वर्तमान काल का अनुमान कैसे किया जाता है? तथा काल की 'अण्वी' (सूक्ष्म) एवं 'बृहत्' (महान) गतियां किस प्रकार जानी जा सकती हैं? इसी प्रकार तृतीय स्कंध के दसवें अध्याय के दसवें श्लोक में विदुर जी मैत्रेय जी से कहते हैं, ''आपने श्रीहरि की जिस काल नामक शक्ति का उल्लेख किया था, उसका विस्तार से वर्णन कीजिए।'' मैत्रेय ऋषि ने अगले दो श्लोकों में तो इतना ही उत्तर दिया है कि त्रिगुणात्मक पदार्थ का रूपान्तर करना ही काल का आकार है, स्वयं तो वह निर्विशेष, अनादि एवं अनंत है। अव्यक्तमूर्ति काल को ही उपादान बनाकर सृष्टि की अभिव्यक्ति होती है। परन्तु इसी स्कंध के ग्यारहवें अध्याय में मन्वंतरादि काल विभाग का वर्णन करते हुए जिस विस्तार से उन्होंने परमाणु, ब्रह्मांड राशियों, सूक्ष्म एवं परम महान काल को व्याख्यायित किया है, उसे चमत्कारिक ही कहा जायेगा।

इस अध्याय में मैत्रेय जी विदुर जी को बताते हैं कि जो 'काल' पदार्थ की 'परमाणु' जैसी सूक्ष्म अवस्था में व्याप्त रहता है, वह 'अत्यन्त सूक्ष्म' (परमाणु काल) है जो सृष्टि से प्रलय पर्यंत उसकी सब अवस्थाओं का भोग करता है, वह परम महान है। वे आगे कहते हैं, 'हे विदुर जी, पदार्थ का जो

सूक्ष्मतम अंश है जिसका और विभाजन नहीं किया जा सकता तथा जिसका अन्यों से संयोग भी नहीं हुआ है, उसे 'परमाणु' कहते हैं। यह परमाणु जिसका सूक्ष्मतम अंश है, उस पदार्थ की 'समग्रता' का नाम परम महान है। पदार्थ के इस सूक्ष्मतम और महत्तम स्वरूप के सादृश्य से परमाणु आदि अवस्थाओं में व्याप्त होकर पदार्थों को भोगनेवाले सृष्टि करने में समर्थ 'काल' की भी 'सूक्ष्मता' और 'स्थूलता' (महानता) का अनुमान किया जा सकता है।

इसके पश्चात् यह बतलाया गया है कि दो 'परमाणु' मिलकर एक 'अणु' बनाते हैं तथा तीन अणु मिलकर एक 'त्रसरेणु' का निर्माण करते हैं। त्रसरेणु के आकार की कल्पना देते हुए मैत्रेय जी कहते हैं, 'त्रसरेणु' किसी द्वार की झिर्री में से आई हुई सूर्य की किरणों के प्रकाश में उड़ता देखा जा सकता है। ऐसे तीन त्रसरेणुओं का भोग करने में जितना समय लगता है, उसे त्रुटि' कहते हैं। इससे सौ गुना काल 'वेध' कहलाता है और तीन वेध का एक 'लव' होता है। तीन लव को एक 'निमेष' एवं तीन निमेष को एक 'क्षण' कहते हैं। पांच क्षण की एक 'काष्ठा' और पन्द्रह काष्ठा का एक 'लघु' होता है। पन्द्रह लघु की एक 'नाडिका' होती है तथा एक 'मुहूर्त' में दो नाडिकाएं होती है। मैत्रेय जी यह भी कहते हैं कि दिन के घटने-बढ़ने के अनुसार छः या सात नाडिका का एक 'प्रहर' होता है जो मनुष्य के दिन या रात का चौथा भाग होता है तथा जिसे 'याम' भी कहते हैं। चार-चार प्रहर के 'दिन' और 'रात' होते हैं और पन्द्रह दिन-रात का एक 'पक्ष'। पक्ष दो होते हैं– 'शुक्ल' एवं कृष्ण'। दो पक्षों का एक मास होता है, जो पितरों का एक दिन-रात है। दो मास की एक 'ऋतु' तथा छः मास का एक 'अयन' होता है, जिसके 'उतरायन' एवं 'दक्षिणायन' दो भेद हैं। दोनों अयन मिलाकर मनुष्यों का एक 'वर्ष', किन्तु देवताओं का एक-दिन रात होता है। ऐसे सौ वर्ष की मनुष्य की परमायु बतायी गई है तथा मैत्रेय जी यह भी कहते हैं कि हे विदुर जी, देवताओं के बारह सहस्र वर्ष से एक चतुर्युगी होती है, जिनमें सत्युग में चार, त्रेता में तीन, द्वापर में दो या कलियुग में एक सहस्र दिव्य वर्ष होते हैं। जिस युग में जितने सहस्र दिव्य वर्ष, उससे दोगुन सौ वर्ष उसकी संध्या एवं संध्याशों में होते हैं। इस प्रकार कलियुग में बारह सौ दिव्य वर्ष या चार लाख बत्तीस हजार मानव वर्ष हुआ करते हैं।

ब्रह्मा जी के दिन और रात की चर्चा करते हुए मैत्रेय जी ने कहा है, प्यारे विदुर जी, त्रिलोकी से बाहर महर्लोक से ब्रह्मलोक पर्यंत भूलोक की एह सहस्र चतुर्युगी के बराबर एक दिन होता है और इतनी ही बड़ी रात होती है। ब्रह्मा जी का एक दिन एक 'कल्प' कहलाता है। ब्रह्मा जी की परमायु ब्रह्मलोक के सौ वर्षों के तुल्य होती है, जिसका आधा भाग परार्ध कहलाता है। अब तक पहला परार्ध व्यतीत हो चुका है। यह दो परार्ध का काल अव्यक्त, आदि विश्वात्मा का एक निमेष माना जाता है। सामान्य रूप में त्रुटि से लेकर द्विपरार्ध पर्यंत फैला हुआ काल सर्व समर्थ होने पर भी सर्वात्मा पर किसी प्रकार की प्रभुता नहीं रखता।

मैत्रेय जी इतने पर भी संतुष्ट नहीं हुए, वे सृष्टि की विशालता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि प्रकृति महत्तत्व आदि से निर्मित यह ब्रह्मांड-कोश भीतर से पचास करोड़ योजन विस्तारवाला है तथा इसके बाहर चारों ओर उत्तरोत्तर दस गुने सात आवरण हैं। उन सबके सहित यह जिसमें परमाणु

के समान पड़ा हुआ दीखता है और जिसमें ऐसी करोड़ों ब्रह्मांड राशियां हैं, वही परमात्मा का श्रेष्ठ रूप है। इस प्रकार, भागवतकार के शब्दों में परमाणु से लेकर अपरिमित विस्तारवाली सृष्टि का व्याप तथा त्रुटि से लेकर दो परार्ध जिसका निमेष है, ऐसे परमकाल का स्वरूप पदार्थ एवं काल के संदर्भ में सूक्ष्म एवं परम महान की परिकल्पनाओं का दिग्दर्शन कराता है।

उपरोक्त वर्णन में जहां परमाणु, अणु, त्रसरेणु, ब्रह्मांड राशियां सूक्ष्मकाल, महत्काल, काल के लोक सापेक्ष या विभिन्न लोकों का समय भिन्न होने जैसे वैज्ञानिक अवबोधों का विवेचन है, कालगणना की युग-पद्धति का उल्लेख है, वहां कुछ राशियां के माप भी दिये गये हैं। भागवतकार द्वारा 'त्रुटि' काल का मेय सूक्ष्मतम माप बताया गया है और यदि दिन-रात का मान चौबीस घंटे मानकर गणना की जाये, तब त्रुटि का कोटिमान $१०^{-४}$ या $१०^{-३}$ सेकड के तुल्य उपलब्ध होगा। आधुनिक अत्यन्त सुग्राही तकनीक वाले कुछ कैमरों में शटर की गति इसी कोटि की होती है। काल का परार्धमान, जो महत् काल का प्रारंभिक छोर कहा जा सकता है (क्योंकि संपूर्ण सृष्टि में व्याप्त काल के संदर्भ में परार्ध को एक निमिष मात्र कहा गया है), उस रचना की परम आयु बताई गई है, जिसके हम अंग हैं। श्रीमद्भागवत में बताये गये कालमान के अनुसार परार्ध का कोटिमान $१०^{+२२}$ सेकंड के सन्निकट होता है। द्रष्टव्य है कि सृष्टि-संबंधी एक आधुनिक सिद्धांत के आधार पर किये गये वैज्ञानिक आकलन से सूर्य का अपेक्षित जीवनकाल $१०^{+१८}$ सेकंड के आस-पास अनुमानित है। हम जानते हैं कि सूर्य से ही पृथ्वी पर जीवन है और सूर्य के विनाश के पश्चात् पृथ्वी या हमारे अस्तित्व की कल्पना असंभव है। सृष्टि-वैज्ञानिकों के एक दूसरे दृष्टिकोण के अनुसार तारामंडलों की ऐसी टककर, जिसमें हमारे सौरमंडल के सदस्य ग्रह टूटकर बिखर जायें $१०^{+१५}$ वर्षों या $१०^{+२२}$ सेकंड में होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार भी हमारे सौरमडंल का जीवन काल $१०^{+१५}$ वर्ष या परार्ध के लगभग है। अतः परार्ध हमारे सौरमंडल के आयुष्य की सीमा का द्योतक है।

इसी प्रकार यदि एक योजन को आठ मील के बराबर मानकर गणना करें, तब ब्रह्मांड कोश का परिमाण लगभग सत्तर करोड़ किलोमीटर अर्थात् $१७^{+१७}$ किलोमीटर के सन्निकट होगा। यह भागवतकार के मत में नेत्रगोचर जगत का आकार है। आधुनिक खगोलशास्त्री हमें बताते है कि एंड्रोमीडा नामक नीहारिका, जिसकी मंद संदीप्ति बस कठिनाई से कोरी आंखों द्वारा देखी जा सकती है, हमसे लगभग $१०^{+१८}$ किलोमीटर दूर है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी मंदाकिनी के नेत्रों से दर्शन संभव नहीं हुए हैं। यह कितना सुखद आश्चर्य है कि दृश्य जगत् के जिस विस्तार का वर्णन श्रीमद्भागवत में किया गया है, वह अधुनातन प्राप्त तथ्यों से काफी मेल खाता है।

श्रीमद्भागवत में पदार्थ के सूक्ष्मतम अंश परमाणु का आकार नहीं बताया गया है। क्योंकि इसे सूक्ष्मतम अंश कहा गया है, अतः इसका और आगे विभाजन संभव नहीं है। सूक्ष्मतम होने के कारण वह इंद्रियातीत या अगोचर है, अतः वह मेय नहीं है। यही कारण है कि परमाणु में व्याप्त काल का मापन संभव नहीं होगा। अतः सूक्ष्मकाल की मेय सीमा पदार्थ के सूक्ष्मतम नेत्रगोचर आकार में व्याप्त काल की ही मात्रा होगी। व्यास जी ने इस कण को त्रसरेणु के रूप में परिभाषित किया है, पर

इसका परिमाप ज्ञात करने का कोई युक्तिसंगत सूत्र पुस्तक में उपलब्ध नहीं होता है। लेकिन यह समझना तो कठित नहीं है कि भले ही भागवतकार को त्रसरेणु के यथार्थ परिमाप का ज्ञान न हो, पर नेत्रों से देखे जा सकने वाले सूक्ष्मतम कण के रूप में उसने त्रसरेणु की परिकल्पना अवश्य प्रस्तुत की थी और उसने यह भी बताया कि त्रसरेणु विभिन्न अणुओं के संयोग से बनता है। पदार्थ की आणविक संरचना (मॉलिक्युलर स्ट्रक्चर) का यह वैज्ञानिक अवबोध अत्यंत महत्त्वपूर्ण है तथा भागवतकार की पदार्थ संरचना संबंधी वैज्ञानिक दृष्टि का उन्मीलन करता है।

अब हम कालगणना की युगपद्धति अथवा कल्पद्धति पर भी थोड़ा विचार करें। इस पद्धति का प्रचलन आज भी भारत में है। पूजा, अनुष्ठान या धार्मिक आयोजनों में संकल्प धारण करते हुए इसी पद्धति का अनुसरण किया जाता है। मनुस्मृति एवं महाभारत में तो इसका उल्लेख है ही, तैत्तिरीय संहिता एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी चारों युगों के नाम पाये जाते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण की हरिश्चन्द्र एवं रोहिताश्व की वह कथा तो सर्वविदित ही है जिसमें कहा गया है कि सोने वाला कलि, बैठने वाला द्वापर एवं उठने वाला त्रेता होता है। चलनेवाला होने के कारण कृत सम्पन्न होता है। अतः हे रोहित, चलते रहो, चलते रहो। ऋग्वेद में भी युगों का उल्लेख अनेक स्थलों पर किया गया है, यद्यपि यह कहना कठिन है कि उसमें वर्णित युग में इतने ही वर्ष होते थे जितने कि स्मृति ग्रन्थों के अनुसार या श्रीमद्‌भागवत में वर्णित विभिन्न युगों में हैं। अतः यह तो निर्विवाद है कि कालगणना की युगपद्धति अथवा कल्पद्धति हमारे देश के व्यावहारिक जगत्‌ में बहुप्रचलित एवं सर्वमान्य थी। तब प्रश्न यह उठता है कि मानव के पृथ्वी पर प्रादुर्भाव के इतने पूर्व की कालगणना का आधार क्या था? कल्पारंभ के समय से ही गणना करना और उसका अभिलेख रखना तो संभव नहीं लगता। सृष्टि के प्रथम दिन का साक्षी कौन है? शायद स्वयं प्रजापति ही हों तो हों, मर्त्य तो कोई हो ही नहीं सकता। कल्पारंभ से गणना करना अथवा उसका हिसाब रखना संभव न हो सकने के कारण युगपद्धति की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह लगाये जाते हैं, परन्तु हमारे देश के गणितज्ञ एवं ज्योतिष इस पद्धति का उल्लेख दीर्घकाल से करते चले आ रहे हैं।

भारतीय ज्योतिर्विदों (ऐस्ट्रोनॉमर्स) में आर्यभट्ट की ऐतिहासिकता तो निर्विवाद है। अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभट्ट' में उन्होंने अपनी जन्म-तिथि का उल्लेख करते हुए कहा है कि ''साठ वर्षों की साठ अवधियां तथा युगों के तीन पाद व्यतीत होने पर जन्म के तेईस वर्ष पूरे हो चुके थे। ''इसके अनुसार कलियुग के ३६०० वर्ष पूरे हो चुकने पर आर्य भट्ट तेईस वर्ष के थे। अतः कम से कम आर्यभट्ट के समय (४२१ शाके अथवा ४९९ ई.) तक कलियुग के प्रारंभ से कालगणना करने का प्रचलन था। आर्यभट्ट ने यह भी कहा है कि युग, वर्ष, मास, दिवस सभी का प्रारंभ एक ही समय से हुआ है। काल अनंत आदि अनादि है, ग्रहों के आकाश में गमन करने से उसका अनुमान किया जा सकता है। प्राचीन भारतीय ज्योतिष ग्रन्थों में एवं पंचांगों में कलियुग के प्रारंभ के समय की ग्रहस्थिति का उल्लेख किया जाता है। उन लोगों को यह मान कैसे प्राप्त हुए? या जो उन्होंने प्रत्यक्ष निरीक्षण (वेध) द्वारा इन स्थितियों को देखा या गणित की सहायता से प्राप्त किया। यह भी जानना रोचक होगा कि ये मान किस सीमा तक शुद्ध हैं? आधुनिक खगोलशास्त्र तो इतना विकसित हो चुका है कि इन

तथ्यों की जांच सरलता से की जा सकती है।

ऐसा नहीं है कि इस प्रश्न पर आधुनिक खगोलशास्त्रियों का ध्यान नहीं गया। इस संबंध में जॉन प्लफेयर एफ.आर.एस. के एडिनबरो रॉयल सोसायटी के ट्रांजेक्शंस सन् १७९० की द्वितीय पुस्तक, खंड एक, पृष्ठ १३५ से १९२ में प्रकाशित शोध लेख 'रिमार्क्स ऑन द ऐस्ट्रोनोमी ऑफ ब्राहमिंस' द्रष्टव्य है। इस लेख में भारतीय ब्राह्मणों द्वारा प्राप्त कुछ खगोल सारणियों या पंचांगों की विस्तृत समीक्षा की गई है। जॉन प्लेफेयर महोदय ने अपने लेख में एक फ्रेंच विद्वान द्वारा स्याम (थाईलैंड) से १६८७ में लाई गई एक पांडुलिपि एवं ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत में प्रेषित तीन खगोल सारणियों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया है। ये पंचांग नरसापुर एवं कर्नाटक के कृष्णपुरम् से १७५० ई. में तथा कोरोमंडल तट पर स्थित तिरुवलूर नामक स्थान से १७७२ में भेजे गए थे। विद्वान प्रोफेसर का कथन है कि भारतीय खगोलशास्त्र में इतनी परिशुद्धता विद्यमान है, जो इसके उद्‌गम एवं प्राचीनता संबंधी समस्त शंकाओं का निवारण करने में सक्षम है और इस शास्त्र को किसी भी दृष्टि से (अन्य देशों के) उस प्राचीन ज्ञान की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, जो मात्र अटकलबाजी या पौराणिक गाथाओं से अधिक कुछ नहीं कहे जा सकते।

इस पांडित्यपूर्ण लेख में विभिन्न खगोलशास्त्रियों के अभिमतों की विस्तारपूर्वक चर्चा करते हुए विद्वान लेखक ने कहा है कि भारतीय ज्योतिष के बारे में विवेचित तर्कों एवं साक्ष्य के आधार पर हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि उन प्रेक्षणों के मान, विशेषकर, तिरुवलूर पंचांग में वर्णित कलियुगारंभ की सूर्य एवं चंद्र की स्थिति, जिन पर भारतीय खगोल शास्त्र आधारित है, ईस्वी संवत् प्रारम्भ होने के तीन हजार वर्ष से भी कहीं पहले वास्तविक निरीक्षण (वेध) द्वारा निर्धारित किये गये थे। प्लेफेयर ने यह भी कहा है कि प्राचीन भारतीय खगोलशास्त्र में वर्णित दो तत्त्वों, प्रथम – सूर्य की मध्यम स्थिति साधन करने का संस्कार जिसे आधुनिक खगोलशास्त्र में सूर्य के केन्द्र का समीकरण कहते हैं तथा द्वितीय – क्रांतिवृत्त की तिर्यकता की तुलना, जब आधुनिक काल के इन दोनों तत्त्वों से की जाती है, तब वे भारतीय ज्योतिषशास्त्र के और अधिक प्राचीन होने का संकेत करते हैं और तब यह स्वीकार करना पड़ता है कि भारत में इस शास्त्र का उद्‌गम ईसा से कम-से-कम ४३०० वर्ष पुराना है, क्योंकि कलियुग के प्रारंभ की ग्रहस्थिति का इतना शुद्ध निर्धारण करने योग्य वेध - कौशल विकसित होने में १००० या १२०० वर्ष से कम तो क्या लगेंगे। यह एक महत्त्वपूर्ण अभिलेख है, जो भारतीय खगोलशास्त्र की प्राचीनता, वैज्ञानिकता आदि सिद्ध करते हुए कलियुग के प्रारंभ को ज्योतिषशास्त्र के बलवान साक्ष्य के आधार पर निर्धारित करता है। इस प्रकार कलियुगारंभ से कालगणना की वैज्ञानिक संभावनाओं के संकेत तो मिलते हैं, पर कल्पारंभ अथवा परार्ध के प्रारंभ से जिस कालगणना का उल्लेख भागवत में किया गया है, उसकी वैज्ञानिकता के विषय में अभी कुछ कह पाना कठिन है। परन्तु प्राचीन भारतीय वाङ्मय में उपलब्ध ज्योतिषीय साक्ष्य के विषय में अधिक अनुशीलन एवं अनुसंधान की आवश्यकता को नकारा नहीं जाना चाहिए। इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाते हुए प्रसिद्ध प्राच्यविद् डॉ. गोविन्दचन्द्र पांडे ने श्री के.डी. सेठना की पुस्तक 'प्रागैतिहासिक भारत में कपास' की समीक्षा करते हुए लिखा है कि प्राचीन भारतीय साहित्य की रचना का

काल-निर्णय करते समय उन ग्रन्थों में उपलब्ध ज्योतिषीय साक्ष्य की अकारण ही उपेक्षा कर दी जाती है।

विचारणीय है कि श्रीमद्‌भागवत का मुख्य विषय गणित, विज्ञान किंवा खगोलशास्त्र नहीं है, उनकी रचना का उद्देश्य तो सर्वमान्य में कर्म, ज्ञान, भक्ति, मर्यादामार्ग, अनुग्रहणमार्ग, द्वैत, अद्वैत, अद्वैताद्वैत आदि के लिए समन्वयमूलक दृष्टि विकसित करना प्रतीत होता है। ऐसे ग्रन्थों में उच्चस्तरीय वैज्ञानिक अवधारणाओं का समावेश एक नई जिज्ञासा उत्पन्न कर देता है। द्रष्टव्य है कि श्रीमद्‌भागवत का श्रवण किसी वर्ण अथवा लिंग के आधार पर प्रतिबंधित नहीं था। पद्‌मपुराण में भागवत सप्ताह में आमंत्रित श्रोताओं के बैठने की जो व्यवस्था बताई है, उसमें सभी वर्णों के लिए बैठने के उचित स्थान का प्रबंध करने का निर्देश दिया गया है। इससे तत्कालीन भारतीय समाज के बौद्धिक स्तर का अनुमान नहीं लगता? सामान्यतः कोई भी ग्रन्थकार सर्वसाधारण के लिए लिखी पुस्तक में ऐसी बातें नहीं लिखेगा, जिन्हें पाठकों अथवा श्रोताओं का बहुसंख्यक वर्ग बिल्कुल ही न समझ पाये। जो भी हो, धर्म एवं विज्ञान का ऐसा समन्वय भारत के अतिरिक्त अन्यत्र दुर्लभ है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय का इस दृष्टि से भी अनुशीलन आवश्यक है कि उनमें समाविष्ट वैज्ञानिक अवबोधों के आधार पर तत्कालीन समाज की स्थिति का आकलन किया जा सके। इस तथ्य की भी खोज की जानी चाहिए कि कहीं विभिन्न मत-मंतातरों के समन्वय के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टि का विकास करना भी भागवत के रचनाकार का उद्देश्य तो नहीं था? कुल मिलाकर भागवतकार ने सृष्टि-वैचित्र्य को सरल, सुस्पष्ट एवं सुलझी दृष्टि से देखते हुए, उसके जटिल रहस्यों का उन्मीलन करते हुए, सर्वजन सुलभ, सरस एवं प्रवाहमान भाषा के काव्यात्मक कौशल के साथ दर्शन, विज्ञान, भक्ति, कर्म एवं ज्ञान के पंचतत्त्वों से एक अद्‌भुत कथावस्तु का सृजन कर दिखाया है।

पूर्व केन्द्रीय मन्त्री,
मानव संसाधन विकास मंत्रालय,
भारत सरकार।

संस्कृति के मूल्य और संस्कृति के आदर्श

माधव गोविन्द वैद्य

संस्कृति अच्छा और बुरा नापने का मापदंड है। क्या अच्छा है और क्या बुरा – इसका ज्ञान तो मनुष्य को संभवतः जन्म से ही होता होगा, परन्तु अच्छे काम करने हैं तथा बुरे कर्मों से दूर रहना है– यह आचरण में लाने के लिए शिक्षा तथा संस्कारों की आवश्यकता होती है। शिक्षा केवल विद्यालयों या पाठशाला में ही नहीं मिलती, बल्कि घरों और परिवारों में भी मिलती है। सामाजिक वातावरण भी एक उत्तम मार्गदर्शक होता है। व्यक्ति के मन पर इस शिक्षा की छाप पड़ती है और उसी के अनुरूप उसका आचरण होता है।

एक अनपढ़, अशिक्षित व्यक्ति को भी अच्छे-बुरे का ज्ञान होता है। चोरी करना बुरा है, दूसरों की सहायता करना अच्छी बात है– इसका बोध उसे रहता ही है। ऐसी बात नहीं है कि केवल सजा या दंड के भय से ही लोग चोरी नहीं करते, बल्कि उनकी अन्तरात्मा उन्हें इस व्यवहार से दूर रखती है। जो दूसरे का है, उसे में नहीं लूंगा, यही उसका निर्धारण होता है। मानव के ऐसे व्यवहारों से ही सांस्कृतिक मूल्यों का सृजन होता है। जो दूसरों का धन है, वह मेरे लिए माटी-मोल हैं[1], तुच्छ है, त्याज्य है।

निसर्गतः स्त्री के प्रति पुरुष का आकर्षण होता है। लेकिन जो स्त्री दूसरे की है, उसकी ओर देखने का हमारा दृष्टिकोण क्या होना चाहिए? क्या अभिलाषा-युक्त? नहीं, कदापि नहीं। उसकी ओर हमें सम्मान, आदर, पवित्रता की भावना से देखना चाहिए, मानो वह मातृतुल्य हो।[2] बस, इसी भावना से एक और सांस्कृतिक मूल्य प्रस्थापित हो जाता है। किसी अनपढ़ को भी इसका पूरा ज्ञान होता है। घर में यदि बालक का जन्म होता है तो क्या कोई उसे 'रावण' के नाम से संबोधित किया जाता है? नहीं। क्यों नहीं किया जाता, जबकि रावण तो एक महान् विद्वान था, सोने की लंका का राजा था। किन्तु रावण को कोई अपना नहीं मानता, उसका अनुकरण भी नहीं करता। वह तिरस्कार योग्य है। जैसा रावण वैसा कंस। कंस ने अपनी बहन को कारागृह में डाल रखा था। राजपद भोगने की लालसा से उसने अपने जनमदाता को भी जेल में ठूंस दिया था। वह भले ही अपनी जाति का हो, फिर भी उसे कोई 'अपना' नहीं कहता। किसी भी यादव व्यक्ति का नाम कंस सिंह कभी किसी ने सुना है? बस, ऐसा ही दुर्योधन के साथ भी है। बड़े भाई की, माता समान पत्नी को केवल बदले की भावना से प्रेरित होकर निर्वस्त्र करने के लिए वह उठा था। जो एक बार मान्य किया, वैसा काम करने को भी तैयार

नहीं था। ऐसा दुर्योधन तो अपनी जाति का हो ही नहीं सकता। कहीं इसी दुर्योधन ने कहा है, 'धर्म क्या है – यह मैं अच्छी तरह जानता हूं, पर धर्मानुसार कार्य करने की मेरी प्रवृत्ति नहीं है। अधर्म क्या है– यह भी भलीभान्ति समझता हूं, पर उससे दूर रहने की मेरी अनुकूलता नहीं है।'[३] ऐसा व्यक्ति भला हमारा आदर्श कैसे बन सकता है। दुर्योधन के हिस्से में ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी और पाण्डवों के पास केवल सात; पर अच्छा और बुरा, पाप और पुण्य के निर्णय का आधार संख्या बल पर न होकर गुणवत्ता पर निर्भर होता है।

हमारा आदर्श तो भगवान् श्रीराम हैं। सौतेली मां द्वारा यह प्रस्ताव रखते ही कि 'भरत राजा बनेगा और राम चौदह वर्ष के लिए वन में जाए', सुनते ही राम वनवास के लिए तैयार हो गए। स्वयं पिता राजा दशरथ ने राम से कहा था, 'राम! तू मुझे कारावास में डाल दे और स्वयं राजा बन जा।'[४] परन्तु नहीं। जनता भी राम के ही पक्ष में थी, परन्तु राम कर्तव्य पर अडिग थे। उन्होंने कैकेयी से पहले ही कह रखा था, 'राजा दशरथ की क्या इच्छा है, यह मुझे आप बताइए, मैं उसी प्रकार चलूंगा, यह मैं प्रतिज्ञा करता हूं। राम एक बार ही बोलते हैं, दुबारा नहीं।'[५]

इसीलिए राम हमारे आदर्श हैं। और भरत? वह भी आदर्श हैं। माता के प्रयत्नों से मिले सिंहासन को उन्होंने लात मार दी। राम तो जंगलों में चले गए थे, परन्तु भरत उनके सिंहासन पर नहीं बैठे। वह राम के पास गए, बार-बार अनुरोध किया, 'आप ज्येष्ठ पुत्र हैं, राजा आपको ही बनना है।' परन्तु राम ने उसे अस्वीकार कर दिया – 'रामो द्विर्नाभिभाषते।' अंततः भरत को वापस लौटना पड़ा। किन्तु इस पराभव से भरत का स्थान कितना ऊँचा हो गया। हिमालय से भी ऊँचा। राम ने जब अयोध्या लौटने से इन्कार कर दिया तो भरत ने उनकी पादुकाएं मांग लीं। उन्हें मस्तक से लगाया और कहा, 'अब ये ही पादुकाएं सिंहासन पर अधिष्ठित होंगी। मैं वल्कल वस्त्र पहनकर, जटाएं बढ़ाकर और केवल कन्द मूल-फल खाकर चौदह वर्ष जीऊंगा और इस अवधि के समाप्त होने पर यदि आप अयोध्या नहीं पहुंचे तो अग्नि प्रवेश कर मैं देह-त्याग करूंगा।'[६] इस संसार में तो राजपद प्राप्त करने के लिए, सत्ता प्राप्त करने के लिए, बड़े-बड़े युद्ध हुए, भीषण रक्तपात हुआ, साम्राज्य बिखर गए, संघर्ष हुए; पर राजसिंहासन पर बैठने के लिए दो भाइयों में हुआ संवाद हमारी भारतीय संस्कृति ने ही हमें सुनाया है।

इसे अपवाद नहीं कहा जा सकता। वरन्तु ऋषि का शिष्य कौत्स गुरुदक्षिणा देने के लिए चौदह सहस्र सुवर्ण मुद्रा की मांग लेकर राजा रघु के पास पहुंचा। कुबेर की कृपा से राजा रघु के खजाने में सुवर्ण मुद्राओं की बरसात हुई थी। रघु ने कौत्स से कहा, 'यह सब आपकी कृपा का फल है। आप सब ले जाएं।' लेकिन कौत्स ने कहा, 'मुझे गुरु को देने के लिए केवल चौदह सहस्र सुवर्ण मुद्राएं ही चाहिए, इससे ज्यादा मुझे नहीं ले जाना है।' इस पर राजा रघु और कौत्स में वाद छिड़ गया और सारी प्रजा उनकी ओर कुतूहल मिश्रित आदर से देखने लगी।[७] यह हमारी भारतीय संस्कृति की ही देन है।

एक सुन्दर युवा राजपुत्र सजे-सजाए रथ पर बैठकर भ्रमण करने निकला। मार्ग में उसने एक बीमार व्यक्ति, एक वृद्ध व्यक्ति और एक शव को देख। वह बड़ा व्यथित हुआ। राजपुत्र को तो कोई बीमारी नहीं रहती, न तो वह वृद्ध होता है। सारे सुख, आमोद-प्रमोद उसके चरणों पर लोटते रहते हैं, फिर भी दूसरों को होनेवाले कष्ट से स्वयं दुःखी होता और प्रतिज्ञा करता है कि इस संसार से सारे दुःखों को समाप्त करुंगा। उसने राजमहल छोड़ दिया, सारे वैभवों को ठुकरा दिया। संसार को सारे दुःखों से मुक्त करने के लिए वह घोर तपस्या में लीन हो गया। यह राजपुत्र सिद्धार्थ, भगवान बुद्ध बने। यह भारतीय संस्कृति का ही आदर्श है।

एक युवा राजा के सम्मुख, उसके एक सरदार द्वारा दुश्मनों के परास्त होने पर एक लावण्यमयी सुन्दर स्त्री नजराने के रूप में प्रस्तुत की गई। सरदार की कल्पना थी राजा खुश होगा, उसे अच्छा ईमान मिलेगा; क्योंकि उस सरदार ने अब तक ऐसे ही ऐय्याश बादशाह देख थे। पर वह राजा जरा भी प्रसन्न नहीं हुआ। उस लावण्यवती स्त्री को पूरी सुरक्षा में ससम्मान घर पहुंचाने की व्यवस्था उसने करवाई। यह छत्रपति शिवाजी की कथा है, जो हमारी भारतीय संस्कृति के आदर्श हैं।

एक ओर ऊपर बताए आदर्श हैं और दूसरी ओर विकृति के नमूने हैं। एक नमूना मुगल शासक अलाउद्दीन है, जिसने चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी के सौन्दर्य की कहानी सुनी और ललचा उठा। वेशर्मी की हद कर उसने पद्मिनी की मांग कर दी। उसके लिए किले पर घेरा डाल दिया, समझौते का नाटक रचा तथा आईने में उसकी छवि देखने की मांग कर दी। यह भी कपट था। किले में आकर उसने पद्मिनी का रूप आईने में देखा। मित्रता के भुलावे में फंसे पद्मिनी के पति उसकी छावनी में जाते हैं, तो उसने कपटपूर्ण रीति से अपने खेमे में कैद कर लिया तथा रिहाई के लिए पद्मिनी की मांग कर दी। किले पर चढ़ाई हुई, राजपूत परास्त हुए, परन्तु पद्मिनी अलाउद्दीन के हाथों नहीं लगी। अपने शील के रक्षार्थ उसने हजारों राजपूतनियों के साथ अग्निकुंड में प्रवेश कर जौहर कर डाला। अपने शील की रक्षा के लिए अग्निसात् होने वाली रानी पद्मिनी और उसकी हजारों सखियां भारत की संस्कृति में आदर्श पात्र हैं। अलाउद्दीन केवल तिरस्कार का पात्र है। कहते हैं कि उसकी इस पशुता के पीछे मजहब आधार है। क्या अनीति, अधर्म का गौरव करना किसी मजहब में संभव है?

महज सात और नौ वर्ष की आयु के दो बालक-गुरु गोविन्द सिंह के दोनों पुत्र फतेह सिंह और जोरावर सिंह – बिना हिचक मृत्यु को गले लगाने के लिए तैयार हो गए, लेकिन अपना धर्म छोड़ने के लिए कतई राजी नहीं हुए। और यह मौत भी कैसी? मानवता के मुख पर कालिख पोतने वाली। उन दोनों बालकों को जिन्दा दीवार में चिनवा दिया गया। जब छोटे भाई के गले तक ईंटें पहुंच गईं तो बड़े भाई की आंखों में आंसू आ गए। छोटे ने बड़े से पूछा, 'क्यों रो रहे हो? मौत से डर लग रहा है क्या?' बड़े भाई ने कहा, 'नहीं भाई, मुझे मृत्यु से भय कदापि नहीं है। तुम्हारा जन्म मेरे बाद हुआ और मुझसे पहले जा रहे हो – इसका दुःख हो रहा है।' निश्चय और धैर्य के पुतले से दो बालक हमारी

संस्कृति के आभूषण हैं और उन्हें मौत दिलानेवाली क्रूरता इतनी निंदनीय है कि जिस दिन इस धरातल से ऐसी क्रूरता का नामोनिशान मिट जाएगा, वह दिन सम्पूर्ण मानवता के लिए महोत्सव का दिन होगा।

'बलिदान', 'हुतात्मा' – ये शब्द हमारी संस्कृति में गौरव के चिन्ह है, पर इनसे भी अधिक गौरव की बात 'विजय' होती है। हमारी संस्कृति में विजय की उपासना होती है, हुतात्मा की नहीं। हुतात्मा का गौरव हम अवश्य करते हैं, परन्तु उसका अन्तिम लक्ष्य विजय होना चाहिए। हमारे सारे अवतार विजयी पुरुष हैं। कुछ सद्‌गुणों के कारण विजय प्राप्त करने में बाधा या अड़चनें आ जाती हैं, इसे 'सद्‌गुण-विकृति' कहा जाएगा। पृथ्वीराज ने अपने बाहुबल से अनेक विजयें प्राप्त कीं, परन्तु शत्रु द्वारा दया की भीख मांगते ही वह उन्हें मुक्त कर दिया करता था। शत्रु हमेशा हमें ही हमारा तत्त्वज्ञान सिखाता है और हम उसकी बातों में आ जाते हैं। पृथ्वीराज इसी भुलावे में आ गया और अपने प्राणों से हाथ धो बैठा। ऐसे अनेक प्रसंग हैं। नजीब खान मल्हार राव होल्कर की गिरफ्त में आ गया था, फिर भी उसे मुक्त कर दिया गया और इसकी कीमत पानीपत के युद्ध में पराजय स्वीकार कर, अदा करनी पड़ी। इतनी बड़ी कीमत कि जिससे अंग्रेज आगे चलकर सारा देश जीतते गए। हमारे सामने 'विजय' का, जीत का आदर्श होना चाहिए। विजयादशमी का यही संदेश है। पराजय अथवा हार के कगार पर खड़े शत्रु को सदा धर्म और नीति का स्मरण होता है; परन्तु उसके इस छद्‌मी मुखौटे के भुलावे में नहीं आना चाहिए–यही भगवान् श्रीकृष्ण का संदेश है।

प्रसंग 'महाभारत' का है। कर्ण कौरवों का सेनापति था और अर्जुन के साथ उसका घनघोर युद्ध जारी था। कर्ण के रथ का एक चक्का जमीन में फंस गया। इसे बाहर निकालने के लिए कर्ण रथ के नीचे उतरा और अर्जुन को उपदेश देने लगा – कापुरुष जैसे व्यवहार मत करो। शूरवीर निहत्थों पर प्रहार नहीं किया करते। धर्म युद्ध के नियम तो तुम जानते ही हो। तुम पराक्रमी भी हो। बस, मुझे मेरे रथ का यह चक्का बाहर निकालने का समय दो। मैं तुमसे या श्रीकृष्ण से भयभीत नहीं हूं, लेकिन तुमने क्षत्रिय कुल में जन्म लिया है, श्रेष्ठ वंश के पुत्र हो। हे अर्जुन! थोड़ी देर ठहरो।[८] परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ठहरने नहीं दिया। उन्होंने कर्ण को जो उत्तर दिया, वह नित्य स्मरणीय है।[९] उन्होंने कहा, 'नीच व्यक्तियों को संकट के समय ही धर्म की याद आती है। द्रौपदी का चीर हरण करते समय, जुए के कपटी खेल के समय, भीम को सर्पदंश करवाते समय, बारह वर्ष के वनवास तथा एक वर्ष का अज्ञातवास के बाद लौटे पांडवों को उनका राज्य वापस न करते समय, अकेले अभिमन्यु को अनेक लोगों द्वारा घेरकर उसे मृत्यु-मुख में डालते समय तुम्हारा धर्म कहां गया था?'' श्रीकृष्ण के प्रत्येक प्रश्न के अन्त में मार्मिक प्रश्न 'क्व ते धर्मस्तदा गतः' पूछा गया है। इस प्रश्न से कर्ण का मन विच्छिन्न हो गया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, 'वत्स, देखते क्या हो, चलाओ बाण। इस व्यक्ति को

धर्म की चर्चा करने का कोई अधिकार नहीं हैं।'

सभी वीर पुरुषों ने यही किया है। शिवाजी को जिन्दा या मुर्दा दरबार में लाने की प्रतिज्ञा लेकर निकले अफजलखान ने बिना किसी कारण के तुलजापुर और पंढरपुर के मन्दिरों को नष्ट कर दिया था। उसकी यह रणनीति थी कि शिवाजी खिसियाकर मैदान में आए। पर शिवाजी की रणनीति रही कि अफजलखान को जावली के जंगलों में खींच लाया जाए। अंततः शिवाजी की रणनीति और रणकौशल सफल हुआ। अफजलखान प्रतापगढ़ पहुंचा और शिवाजी ने उसे यम सदन भेजकर विजय प्राप्त की। शिवाजी की इस रणनीति को 'कपट नीति' कहने वाले पुस्तक-पंडितों को 'विजय' का महत्त्व ही नहीं मालूम! राजपूतों और सिखों का हौतात्म्य अत्यन्त गौरवशाली है, उनका पराक्रम भी अतुलनीय है; परन्तु इस बलिदान को, पराक्रम को, विजय का जो फल मिलना चाहिए, वह संभव नहीं हुआ। सचमुच यह दुर्भाग्य की बात है। हमारी संस्कृति में विजय की ही पूजा होती है।

स्वप्न में दिया वचन पूर्ण करने वाला हरिश्चन्द, शरण में आए कबूतर को अपने शरीर को मांस देने वाला शिवि, देवताओं की विजय के लिए अपनी अस्थि देने वाला दधीचि, हृदय से पति माने व्यक्ति का एक वर्ष के बाद होने वाले निधन को जानते हुए भी उससे ही विवाह करनेवाली और साक्षात् यम से विवाद करनेवाली सावित्री, सारी सम्पत्ति ठुकराकर आत्मज्ञान के मार्ग का अनुसार करनेवाली मैत्रेयी, पिता की आज्ञा को शिरोधार्य कर राजपद का त्याग करने वाले श्रीराम, असली उत्तराधिकारी के वनों में रहने तक वल्कल वस्त्र धारण करते हुए घास-फूस की शय्या पर सोने वाले भरत, स्वतन्त्रता के लिए भटकते फिरते राणा प्रताप, राजपुत्र के लिए अपने पुत्र का बलिदान देने वाली पन्ना धाय, राजा द्वारा अन्यायपूर्वक पिता को हाथी के पैरों तले कुचलवाने के बाद भी अपनी सारी जागीर राजा के लिए दान करने वाला खंडो बल्लाल, स्वतन्त्रता सेनानी, क्रान्तिकारी – ये सभी हमारे आदर्श हैं। सत्य, शील, स्वामिनिष्ठा, धर्मनिष्ठा, त्याग, बलिदान, विजय आदि मूल्यों को प्रतिष्ठापित करने के लिए जिन व्यक्तियों ने त्याग किया, वे सब हमारे आदर्श हैं। इन सारे आदर्शों ने जिन मूल्यों की स्थापना की उन मूल्यों की रचना, यानि संस्कृति। संस्कृति और कुछ नहीं होती। संस्कृति माने जीवन-मूल्यों की मालिका। जिनके लिए हमें जीवित रहने में आनन्द हो और मृत्यु में भी गौरव मिले, ऐसे मूल्यों की परम्परा ही संस्कृति होती है। इन मूल्यों की रक्षा का अर्थ ही संस्कृति की रक्षा करना होता है। ऐसे मूल्यों की परम्परा ही संस्कृति का द्योतक है। समय के साथ अनेक परिवर्तन होते हैं। पोशाकों में बदलाव आएगा, घरों की रचना में परिवर्तन होगा, खान-पान के तरीके भी बदलेंगे; परन्तु जीवन-मूल्य तथा आदर्श जब तक कायम रहेंगे तब तक संस्कृति भी कायम रहेगी। यही संस्कृति राष्ट्रीयता का आधार होती है। राष्ट्रीयता का पोषण यानी संस्कृति का पोषण होता है – इसे ही 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' कहा जाता है।

सन्दर्भः

1. परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
2. मातृवत् परदारेषु।
3. जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।
4. अहं राघव कैकेय्या वरदानेन मोहितः।
   अयोध्यायां त्वमेवाद्य भव राजा निगृह्य माम्।।
   (वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकांड, ३४।२६)
5. रामो द्विर्नाभिभाषते। (वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकांड १८।३०)
6. स पादुके सम्प्रणम्य रामं वचनमब्रवीत्।
   चतुर्दश हि वर्षाणि जटाचीरधरो ह्यहम्।।
   फलमूलाशनो वीर भवेयं रघुनन्दन।
   तवागमनमाकाङ्क्षन् वसन् वै नगराद् बहिः।।
   तव पादुकयोर्न्यस्य राज्यतन्त्रं परंतप।
   चतुर्दशे हि सम्पूर्णे वर्षेऽहनि रघूत्तम।।
   न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।
   (वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकांड, ११२।२३-२६)
7. जनस्य साकेतनिवासिनस्तौ द्वावप्यभूतामभिनन्द्यसत्त्वौ।
   गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहोऽर्थी नृपोऽर्थिकामादधिकप्रदश्च।। (रघुवंश, सर्ग ५, श्लोक ३१)
8. मुहूर्तं क्षम पाण्डव। महाभारत, कर्णपर्व, अध्याय ६०, श्लोक १०८-१६ पठनीय हैं।
9. देखिए महाभारत, कर्णपर्व, अध्याय ६१, श्लोक १-१४।

ॐ जय जगदीश हरे! आरती के रचयिता
पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी

प्रो. आर. के. पराशर

ॐ जय जगदीश हरे' आरती के रचयिता पंडित श्रद्धाराम फिल्लौरी जी के बारे में आम लोगों के मन में यही धारण है कि वे एक अत्यन्त विनम्र स्वभाव के व्यक्ति होंगे जिन्होंने अपने आप को 'मैं मूर्ख खल कामी/ मैं सेवक तुम स्वामी'' तक कहा है, परन्तु सच्चाई यह है कि अपने स्वतन्त्र एवं निर्भीक स्वभाव तथा पराविद्या (ब्रह्मज्ञान) के कारण इनका व्यक्तित्व भक्ति रस में लीन होते हुए भी विवाद के घेरे से बाहर नहीं रहा। ये एक बहुमुखी-प्रतिभा सम्पन्न लेखक थे। इनकी पद्य और गद्य रचनाएं हिन्दी, पंजाबी, सस्कृत एवं उर्दू में भी उपलब्ध हैं। इनका जन्म ३० सितम्बर १८३७ को जिला जालन्धर के फिल्लौर नामक नगर में हुआ। इनकी माता का नाम श्रीमती विष्णुदेवी एवं पिता का नाम श्री जयदयाल जोशी था, जोकि ब्राह्मण-वृत्ति, पुरोहित कर्म, हवन एवं ज्योतिष से आजीविका कमाते थे।

विद्या अध्ययन तथा उपनिषदों का अध्ययन करने के बाद अठारह वर्ष की आयु तक इन्हें इतना आत्म -विश्वास हो गया कि ये महाभारत और श्रीमद्भागवत आदि महान ग्रन्थों की कथा करने लगे। सन् १८५७ की क्रान्ति के दिनों में इनकी आयु करीब २० वर्ष की थी। इनके ओजस्वी कथा वाचन को सुनने के लिए फिल्लौर में उत्तर प्रदेश के सिपाहियों की भीड़ उमड़ने लगी। जब इसकी खबर अंग्रेज अफसरों को मिली, उन्होंने पंण्डित जी को कथा करते हुए ही गिरफ्तार कर लिया और उन्हें फिल्लौर की सीमा से बाहर जाने के आदेश दिए। वे फिल्लौर से पटियाला गए जहां महाराज से सरकारी सम्मान प्राप्त कर कुछ समय बाद हरिद्वार और ऋषिकेश पहुंचे। लगभग दो वर्ष बाद पंडित जी लुधियाना में आकर रहने लगे। इनके बुद्धिबल एवं निर्भीकता से प्रभावित हो कर पादरी लोग इनसे हिन्दी और पंजाबी भाषा सीखने लगे। पादरी न्यूटन साहिब से मामूली मन मुटाव के बाद इन्होंने उनके बन्धन में न रहने का फैसला किया। पादरी न्यूटन ने इन्हें एक प्रशंसा पत्र भेजा जिसमें लिखा है, ''मुझे तीन पंडित का काम यह अकेला देता था। इसका मन ऐसा बेपरबाह है.....कि यह किसी के बन्धन में नहीं'' (प्रेम सागर पृ. २८)

इसके बाद लगभग बारह वर्ष तक पंडित जी पंजाब के भिन्न-भिन्न नगरों में कीर्तन, कथा वाचन तथा धर्मोपदेश का काम करते रहे। सन् १८६२-६३ में वे पहली बार लाहौर गए वहां इनके

व्याख्यानों से प्रभावित हो कर इनके अनेक शिष्य बन गए। सन् १८६७ में इन्होंन लुधियाना में हिन्दू स्कूल और हिन्दूसभा की स्थापना की। सन् १८७० में धर्म प्रचार के लिए कांगड़ा, मण्डी, चम्बा, सुकेत, नादौन, पालमपुर, भागसू आदि स्थानों पर वर्तमान हिमाचल में गए, जहां इनका भव्य स्वागत हुआ और बहुत से राजा इनके श्रद्धालु बन गए। देखिए पंजाबी पहाड़ी बोली में इनके द्वारा संवत् १६३७ में रचित एक कविता –

इत्थू उत्थू जित्थू कित्थू मिंजो दिक्खा करीदा
है साहिबां गलाया जिस ईश्वरा बिचारी के।
जीव अते ब्रह्म सदा भेद म्है की न्हई रहिया
वेदे मिंजो रूप म्हारा दसिया तितही।
जपी जपी नाम मते मान्हू मरी खपी गये।
इश्वरे दा भेद कुसु पाया मन धारी के।
चरण जे गुरां दे मनाय करी श्रद्धा ते
लद्धड़ा गुपाल मिंजो भेद भ्रम टारी के।

(टोकी डॉ. राजेन्द्र, पृ. ८६)

सन् १८७२ में अमृतसर में और १८७८ में जम्मू कश्मीर के महाराजा रणवीर सिंह के अनुरोध पर इन्होंने रघुनाथ मन्दिर में धर्म सभाएं आयोजित कीं। महाराजा आम लोगों के बीच बैठकर इनका व्याख्यान सुनते थे और उन्होंने इन्हें १००० रु. भेंट किया।

४३ वर्ष की आयु में २५ जून १८८१ में पंडित श्रद्धाराम जी का देहावसान हो गया। पंडित जी को अपने देहावसान के बारे में पूर्वाभास हो गया था। सत्यामृत-प्रवाह की भूमिका में उन्होंने लिखा था "अब मेरी आयु चालीस वर्ष से आगे निकल गयी। अनुमान से जाना जाता है कि अब मृत्यु का समय निकट है।" इनके निधन पर १६/१७ जुलाई सन् १८८१ की भारत दीपिका लाहौर ने लिखा "स्वामी श्रद्धा राम जी सनातन धर्म रक्षक गुणी, उपदेष्टाओं में अग्रगण्य, धार्मिकों में श्रेष्ठ पौराणिकों के एकमात्र स्तम्भ और अवलम्ब थे जिनका पूर्ण प्रेम मातृभाषा की उन्नति की ओर झलकता था।"

बम्बई के Theosophist ने अगस्त १८८१ के अंक में लिखा : A great champion and leader of Hindu religion, he disseminated his opinions so boldly and eloquently that neither Braho nor Arya Samajists ever ventured to cross him. His death is an irrevocable loss to the hindu community."

हिन्दूधर्म के रक्षार्थ इनका एक अविस्मरणीय एवं ऐतिहासिक प्रयास है, कपूरथला के राजा रणधीर सिंह को ईसाई धर्म में दीक्षा लेने से सफलतापूर्वक रोकना। जालन्धर के एक बड़े पादरी श्री गोलकनाथ के व्याख्यानों से प्रभावित होकर महाराज रणधीर सिंह ईसाई धर्म अपनाने के इच्छुक हो गए। उन दिनों पं. श्रद्धाराम जी जालन्धर छावनी में कथावाचन कर रहे थे। उन्होंने महाराजा को संदेश भेजा कि उन्हें मिले बिना महाराजा धर्म परिवर्तन न करें। पंडित जी के प्रभावशाली तर्कों से प्रभावित

होकर महाराजा १८ दिन तक रोज तीन-तीन घण्टे शंका-समाधान करवाते रहे। अन्तिम दिन महाराजा साहिब ने कहा, "धन्य हो स्वामी! मैंने आज तक कोई ब्राह्मण ऐसा नहीं देखा।" महाराजा कपूरथला की भान्ति अन्य अनेक व्यक्तियों ने भी इनके प्रभाव से धर्म-परिवर्तन का विचार त्याग दिया।

पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी एक अद्भुत समाज सुधारक थे। अपने समय की अनेक कुप्रथाओं जैसे कि सती-प्रथा, अशिक्षा, बहु-पत्नीवाद, वेश्यावाद, बाल-विवाह आदि पर पंडित जी ने अपने **भाग्यवती** नामक उपन्यास में कुठाराघात किया है। उनकी इस रचना को हिन्दी का 'प्रथम उपन्यास' कहलाने का श्रेय प्राप्त है, यह पुरानी कथा कहानियों से अलग एक नई परम्परा का उपन्यास है। भाग्यवती एक सर्वगुरु सम्पन्न, सुशिक्षित तथा प्रगतिशील गृहस्थ नारी है जिसके चरित्र के माध्यम से तथा घटनाओं के क्रम से साधारण बोल-चाल की भाषा में मौलिक विचार प्रकट किए गए हैं। उदाहरण के लिए :

धिक्कार है उन पर कि जो यह कहते हैं कि स्त्री को विद्या न पढ़ानी चाहिए, और बड़े ही मूर्ख हैं वे लोग जो अपने मुख से ये बातें कहा करते हैं कि पढ़ी हुई स्त्री बिगड़ जाती है। (पृ. २६६)

इसी तरह **शतोपदेश, धर्म-संवाद, सत्यामृत-प्रवाह,** आदि में जगह-जगह पर आत्मोद्धार एवं समाज के प्रति व्यक्ति की जिम्मेवारी की ओर ध्यानकर्षण किया गया है। देखिए 'शतोपदेश' के कुछ दोहे –

दोहा नं. १६

एक टेक जगदीश की, एक प्रिया से नेह।
जीवन लो जिसके रहे, जान परम यत येह।।

दोहा नं. २८

धन पावे कुछ दान कर, अथवा कीजे भोग।
दान भोग बिन धन गहे, वृथ बटोरत रोग।।

दोहा नं. ३५

माता पिता जो जो करत, पुत्रन से उपकार।
ता को जो मूलत तनय, सो गर्धप निरधार।।

काव्य क्षेत्र में इनकी **सत्यधर्म मुक्तावली** नाम की पुस्तक सन् १८७५ में प्रकाशित हुई। पंडित जी के शिष्य श्री तुलसी देव ने सन् १८९० में श्रद्धा राम जी की उपलब्ध पद्य-रचनाओं का संकलन 'सत्यधर्म-मुक्तावली' के साथ ही प्रकाशित करवा दिया। इस संकलन के प्रारम्भ में ही 'जय जगदीश हरे' शीर्षक आरती है जिसे उत्तरी भारत में ही नहीं अपितु विश्वभर में जहां भी सनातनी हिन्दू हैं, बड़ी श्रद्धा और प्रेम से गाते हैं। सर्वमान्य इस आरती का पूर्ण रूप इस प्रकार है –

।। आरती।।

।।ॐ जय जगदीश हरे।।

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी! जय जगदीश हरे।
भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे।। ॐ.....
जो ध्यावे फल पावे, दुख विनशे मन का।
सुख सम्पति घर पावे, कष्ट मिटे तन का।। ॐ.....
माता पिता तुम मेरे, शरण गहूं मैं किसकी।
तुम बिन और न दूजा, आस करुं जिसकी।। ॐ.....
तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ.....
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।।ॐ.....
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपति।
किस विधि मिलूं दयामय, तुमको मैं कुमति।। ॐ.....
दीनबन्धु दुःखहर्ता, तुम ठाकुर मेरे।
अपने हाथ बढ़ाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ.....
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।

श्रद्धा राम जी प्रायः अपनी रचनाओं में अपने नाम का प्रथम अंश 'श्रद्धा' ही प्रयोग करते हैं। आरती की अन्तिम पंक्ति **श्रद्धा भक्ति बढ़ावों संतन की सेवा** है, परन्तु इस पंक्ति के बाद में कहत शिवानन्द स्वामी, कहत हरिहर स्वामी जोड़ कर इस आरती के लेखन का श्रेय पंडित जी को न मिल कर अन्य को चला जाता है जो कि सरासर अन्याय है। इस आरती का सम्बन्ध बाहरवीं शताब्दी के संस्कृत के प्रसिद्ध कवि जयदेव के गीत गोविन्द के प्रथम सर्ग में लिखी 'मालवरागे' 'रूपकताले' अष्टपदी के ध्रुवक 'जय जगदीश हरे' के साथ माना जाता है। डॉ. ठाकुर दत्त जोशी अपनी पंजाबी पुस्तक **मद्धकालीन पजाबी प्रगतिशिल्प** में लिखते हैं – 'पंडित शरधा राम फिल्लौरी ने जै देव दे 'गीत गोविन्द' दी तुक ''जै जगदीश हरे' नू अधार बणा के 'ओम जै जगदीश हरे' आरती लिखी जो अज्ज वी मंदरां विच बड़े शरधा नाल गाई जांदी है'' (जोशी डॉ. ठाकुर दत्त पृ. ५४)

आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य का इतिहास में पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी को एक ''विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान पंडित, सच्चा हिन्दी हितैषी एवं सिद्ध हस्त लेखक'' कहा है। तथा हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने हिन्दी साहित्य (उद्भव और विकास) में इन्हें ''अपने युग का शक्तिशाली गद्य लेखक कहते हुए लिखा है कि इनके गद्य में कठिन आध्यात्मिक तथ्यों को सरल भाषा में प्रकट कर देने की पूर्ण क्षमता थी।''

सत्यामृत प्रवाह (१८८० में रचित, १८८८ में प्रकाशित) जो कि पंडित जी की अन्तिम रचना है, मैं उन्होंने सनातन धर्म में फैले अन्धविश्वासों पर निर्भयता और निसंकोच से प्रबल प्रहार किया है। स्वतन्त्र चिन्तन के आवेश में कई बार यह ऐसी बातें भी कह दिया करते थे जिन्हें सुन कर अन्य धर्म वालों का तो कहना ही क्या स्वयं कट्टर सनातन धर्मी भी इन्हें नास्तिक कहने लगे थे। (प्रेम सागर, पृ. ३) उदाहरण के तौर पर उनके स्वतन्त्र एवं निर्भीक स्वभाव की एक झलक नीचे दिए गए शब्दों में देखिए—

''जैसे वेद पुराण मनुष्यों के रचे हुए ग्रन्थ हैं, किसी बात में सच्चा और किसी बात में झूठा उनका कथन है। उसी प्रकार अन्य मतों के ग्रन्थ भी जान लेने चाहिए कि जिसको ईश्वर की वाणी कहते हैं। हम सच कहते हैं न कोई ईश्वर है, न उसकी कोई वाणी है। ये सब ग्रन्थ बुद्धिमानों ने अपनी बुद्धि के अनुसार रचे हुए हैं। (सत्यामृत-प्रवाह, बुद्धिवादी प्रकाशन, कलकत्ता - १९६५, पृ. २४६)(प्रेम सागर पृ. १६)

पंडित जी ने कभी मूर्तिपूजा का आग्रह नहीं किया। वे तो मूर्तिपूजा का निषेध भी करते थे-
रूप न रेख निरंजन जोऊ ताको कहा सजाना।
बिन शरीर ठाकुर हित कैसे बस्तर भूषण नाना।
सीस आकाश पताल पैर कित-चन्दन पुष्प चढ़ावं।
भूख प्यास बिन सदा विराजै काको भाग लगावहं।
नासा नैन न जाके कोऊ धूप दीप कित जोरो।
कान कला नहीं जिस ठाकुर के काहे बजंतर ढोरो।
घट घट पूर्ण है परमातम कोउ न जानहु दूजा।
'श्रद्धा' सहित सवन को पोषहु मुक्तिपंथ यह पूजा।

सत्यधर्म मुक्तावली III (संवत् १९३७)

पंडित जी के तार्किक एवं बुद्धि निष्ठ व्यक्तित्व ने सर्वमान्य ईश्वर की सत्ता एवं स्वरूप पर ही संदेह प्रकट कर दिया है। इनके कथनानुसार देह से भिन्न जीव है ही नहीं, जो समष्टि में ब्रह्म है वही व्यष्टि में जीव संज्ञक हो जाता है। सत्यामृत-प्रवाह की भूमिका में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि 'पराविद्या' की बात केवल ऐसे अधिकारी के लिए ही लिखी है जिसकी बुद्धि अति कुशाग्र एवं उत्तम हो और ऐसी आशा भी व्यक्त की है कि लोग इस ग्रन्थ के पाठ से यह निष्कर्ष न निकाल लें कि यह नास्तिक मत को सिद्ध करता है।

श्रीमद्‌भगवदगीता में भगवान श्री कृष्ण के आदेश हैं कि —

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वानूयुक्तः समाचरत्।। (अ. ३, श्लो. २६)

श्रद्धाराम फिल्लौरी जी ने भी केवल सुनी सुनाई बात को मान लेने वाले एवं युक्ति प्रमाण रहित धर्म ग्रन्थों के आदेश पर चलने वाले जनसाधारण के लिए धर्मकर्म का उपदेश किया है, न की

ज्ञान की पराकाष्ठा पराविद्या का।

अपरा का अधिकार जिंह, तासों परा न भाख।
जो समझत है परा को, तासों गुप्त न राख।। (शतोपदेश, ६६)
लोक वेद पशु कुल पशु, गुरु पशु पशु ये चार।
साचझूठ परखे नहीं, चलें तिन्ही अनुसार।। (शतोपदेश ६१)

शुद्ध अद्वैत तत्त्व को भलीभान्ति आत्मसात किए बिना परम शून्य की बात करना और जगत् और ईश्वर को मिथ्या कहना अत्यन्त भयंकर एवं हानिकर है। ऐसी मानसिकता से ही नास्तिकता जन्म लेती है। बाहरी सत्य जैसा कि अनुभव के आधार पर समझ में आता है (तथागत) एवं जगत के बारे में जगद्गुरु स्वामी निश्चलनन्द जी कहते हैं –

Without taking recourse to popular philosophy the acceptance of the philosophy of nihilism (Shunyanvada) is dangerous like a snake not well caught or a knowledge not well received. The nature of the 'tathagat' and of the jagat (The world) is the same (Nishchalananda Sarawati Swami P. २८)– यानि कि जन्मान्य दर्शन का आधार लिए बिना 'शून्यवाद' एक ऐसे सांप की तरह है जिसे ठीक से नहीं पकड़ा गया है या ऐसे ज्ञान की तरह है जिसे यथावत ग्रहण नहीं किया गया है।

पंडित श्रद्धाराम फिल्लौरी पर नास्तिकता के मिथ्यारोपणा के साथ एक और विवादास्पद टिप्पणी की जाती है कि ये अंग्रेज भक्त थे। 'श्रद्धाराम ग्रन्थावली' के सम्पादक डॉ. सरनदास भनोत (१९६६) का संदर्भ देते हुए प्रेम सागर लिखते हैं कि पंडित श्रद्धाराम ने भाग्यवती उपन्यास में तीन चार स्थानों पर अंग्रेज भक्ति का प्रमाण दिया है जैसे – "अब तो ईश्वर ने हमको उस अंग्रेज की प्रजा बनाया कि जो कभी अन्याय नहीं करना चाहता (पृ. १४१)। सरकार अंग्रेजी में यही तो अच्छाई है कि प्रजा को किसी भान्ति की रोक टोक नहीं (पृ. २३४)।" इनके समान चतुर और प्रजा का भला चाहने वाला राजा आज और कौन है? (पृ. २७६) (प्रेम सागर पृ. २२)

पं. श्रद्धाराम जी अपनी पंजाबी में लिखी पुस्तक पंजाबी बातचीत की भूमिका में लिखते हैं– इस ते पहलां पंजाबी भाखा विच मैं उह पोथी लिख के सरकार विच दिती सी कि जिस विच पंजाब देस दीआं जातां अर करतूतां अर साधां सन्ता अर राजियां दीआं हकीकतां लिखिआं होईआं सीआं कि जिसनू पढ़ के पादरी जान न्यूटन साहिब ने जो पंजाबी जबान नूं बहुत अच्छी तरां जाणादे हन, मैंनू एह सलाह दिती कि इक ऐही पोथी पंजाबी जबान विच लिखो कि जिस विच सब तरां दे मुहावरे आ जाण। उस मित्तर दी सलाह मन्न के मैं इह (पंजाबी बातचीत) नामे पोथी लिख के संमत १९३३, ईस्वी सन् १८७५ विच उस मित्तर नूं दित्ती कि जिस ने गवरमन्ट पंजाब ते मनजूर करा के मैनूं इस का इनाम दुआइआ।" (हरचरन सिंह पृ. १६)

इसी तरह इनकी दूसरी बहुचर्चित पंजाबी पुस्तक **सिक्खां दे राज दी विखिया** जिसका अंग्रेजी में अनुवाद और संपादन Henry court ने किया के प्राक्कथन में लिखा है –

This book , Pandat Sardha Ram, who live in the city of phalour, in the district of Jalandhar, prepared agreeably to the desire of Sir Donald macleod, Lieutenant Governor of the Panjab, in the year 1922, Bir Bikrajit i.e 1866 A.D. whoever shall fix his thoughts on it, and travel through it from beginning to end, will place in his mind the full particulars of the Panjab. (Henry court, P. viii).

इन सभी बातों से ऐसा मान लेना कि पंडित जी अंग्रेज भक्त थे एक अविचारित निष्कर्ष मात्र है। इस्लाम द्वारा भारत में धर्म और संस्कृति पर किए प्रहारों के बाद इस देश के जनमानस में अंग्रेजी शासन के प्रति ऐसी भावना प्रायः देखने को मिलती थी। इसके अतिरिक्त उन दिनों में विदेशी शासन के विरुद्ध राष्ट्रीयता की भावना अभी जन्म ही ले रही थी। अंग्रेजों को पंजाबी पढ़ाने तथा इस कार्य के लिए उनसे धन और प्रशंसा प्राप्त करने को आजीविका साधन तो कहा जा सकता है 'अंग्रेज भक्ति' नहीं। अक्तूबर १, २०१५ को डी.ए.वी. कालेज फिल्लौर में श्रद्धाराम फिल्लौरी ट्रस्ट की ओर से पंडित जी का १७८ वां जन्म दिवस मनाया गया। इस अवसर पर स्वामी कृष्णानन्द जी ने कहा - अंग्रेज राज दौरान पंडित जी ने धार्मिक ग्रन्थां दे वेरवे देके देश भगती दा परचार कीता जिस कारन इन्हां नू फिलौर तों बाहर कढ दित्ता गिया सी (पंजाबी ट्रिब्यून, २ अक्तूबर, २०१५)

सन्दर्भ :

१. प्रेम सागर, श्री श्रद्धाराम फिल्लौरी की हिन्दी साहित्य को देन, पंजाब सरकार (अवर्षांकित)

२. टोकी डॉ. राजेन्द्र, श्रद्धाराम फिल्लौरी ग्रन्थावली, भारत पुस्तक भण्डार, सोनिया बिहार, दिल्ली - ११००६०, २०१५

३. जोशी डॉ. ठाकर दत्त, मद्धकालीन पंजाबी प्रगीत-शिल्प, आधुनिक किताब घर, जालन्धर - १४४००१, २०१५ (पंजाबी)

४. Nischalananda Sarawati Swami his holiness Jagada Guru Shankaracharya, Ganita Darshana (Eng.Tr. Dr. Mohan Gupta), Swasti Prakashan Sansthan, Shri Govardhana Matha, Shri Shankaracharya Pitha, Puri, Orissa- 752001, 2005

५. हरचरन सिंह डॉ. (सम्पादक),पंजाबी बातचीत, पं. शरधा राम फिल्लौरी, न्यू बुक कम्पनी, माई हीरां गेट, जालन्धर, १९६७ (पंजाबी)

First edn. Published in 1884 under the authority of the Panjab text book committee, printed at the Lodiana mission press.

६. Henry court 'सिक्खां दे राज दी विखियां' Tribune English ed. by henry court, Susil Gupta (India) Private limited Calcutta - 12, 1959

पूर्व वायस प्रिंसिपल,
३३, टेगोर पार्क, जालन्धर - १४४००८

लोक आख्यान

राजस्थान की लोक गाथाओं में इतिहास संदर्भ

उमा शंकर जोशी

इतिहास शब्द की व्युत्पति इति + ह+ आस शब्दों के मेल से हुई है। इति अर्थात् ऐसा यह या इस प्रकार, ह = निश्चित, आस = था। इससे इतिहास शब्द का अर्थ हुआ – ऐसा निश्चित हुआ था या ऐसा पूर्वकाल में था।

अतः जो कुछ अतीत अर्थात् भूतकाल में घटित हुआ है उसका प्रमाणिक तथ्यों के आधार पर विवेचन कर जन मानस के लिये प्रस्तुत करना ही इतिहास है। प्राचीन काल से ही इतिहास लेखन साहित्य की दोनों विधाओं गद्य तथा पद्य में होता रहा है। ''गेय पद्यों में जो इतिहास वर्णित होता है उसे 'गाथा' कहते है।'' लोक गाथाओं के द्वारा हमें इतिहास का ज्ञान मनु की उत्पत्ति से प्राप्त है। इन लोक गाथाओं में संस्कारों द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी संस्कृति संवर्धन एवं धर्म का पोषण हुआ है। लोकगाथायें समाज को ऊर्जा, प्रेरणा तथा आत्म विश्वास प्रदान करती है। इस पृथ्वी पर मानव उत्पति के १९५ करोड़ वर्ष बाद भी लोक गाथाओं के कारण ही भारतीय संस्कृति के मानक बिन्दु धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, आज भी भारतीय जन-मानस में विद्यमान है।

परमात्मा के २४ अवतारों का लोक गाथाओं में वर्णन मिलता है जिन से इतिहास के कालक्रम का पता लगता है। हमें ध्रुव, शुकदेव, परीक्षित की लोक-गाथाओं द्वारा सतयुगीन मानव के चरित्र का आभास ही नहीं होता अपितु उस समय के शासक का प्रजा के प्रति पुत्रवत व्यवहार एवं परिपक्व शासन व्यवस्था का भी ज्ञान होता है।

भादो भाव विचार राजा जी, आप ही उठ ध्याये,
दोनों भुजा पकड़ली कर से, ध्रुव से बतलाये।
ध्रुव एक बचन सुनो मेरा, हमको छोड़ बना मत जाओं,
सभी राज तेरा, राव यूं मुख से फरमाये।।

दशरथ की मृत्यु के बाद जब भरत राम से मिलने के लिये वन गमन करते है। तब अयोध्या की सारी प्रजा उनके साथ वन के लिए प्रस्थान करती है। त्रेता के युग पुरूष राम का चरित्र चित्रण भी लोक गाथाओं में हुआ। लोक गाथाओं में राम के चरित्र द्वारा मातृ-पितृ भक्ति, भ्रातृ प्रेम, मित्रता के लिये सम्पूर्ण जन मानस की भावनाओं का सम्मान जैसे गुणों का पत्ता लगता है।

लागत ही वैशाख कैकई बारी करडारी, र कैकेई बावरी करडारी,
धक जीवन धिक्कर नहीं हो, तुम सी महतारी।
दुख तंह नगरी को दिन्यो, तीन लोक के नाथ राम को वनवासी किन्यो,
मुडमति कैसी क बन आई, करम रेख ना मिटे, करो चाहे लाखन चतुराई।
जेठ पंच मिल कहे भरत को गादी बैठाओं र भरत को गादी बैठाओं र भरत को

गादी बैठाओं।
भरत धरत कानो में अंगुली मेरी गरदन मत मारो, सरे नहीं इनबात न का सार''
तीन लोक के नाथ बनेंगे अयोध्या के राजा, बात या सब के मन भाई। करमरेख -
आसाढ आशा राम मिलन की मन मे लाग रही, राम कौन बन हमें बताओं भरत ये बात कही,
नगर का नर और सब नारी, रथ छोड़ा गज बाजी भीड़ भई भरत संग भारी।
नदी ज्यूं सागर को ध्याई। करम रेख ना मिट करो चाहे लाखों चतुराई।।

द्वापर की लोक गाथायें वासुदेव श्री कृष्ण को मुख्य पात्र मानकर रची गई है। इन लोक गाथाओं में महाभारत में घटित सारी घटनाओं का वर्णन मिलता है। लोक गाथाओं में श्री कृष्ण व ग्वालों की बाल सुलभ लीलाओं का सुन्दर चित्रण मिलता है।

लठीया पे बिठलाया, ग्वाल बतलाय, फैल धर चाल्या फैल धर चाल्या।
जद सुबक सुबक रोणे को लगे नन्दलाला,
सब गोप मसलते नैन लगी दुख दैन बुरी बृजबाला, ले गई कृष्ण का मुकुट बंषरी माला।
सब गढ़ गोकुल में आये, ड्योडी पर धुम मचाये, सब नर नारी जुड ध्याये,
श्री कृष्ण चौक मे ल्याये,
भाज के दशोदा आई, आंसू गेरे टस-टस, पूछे मत मैया मेरी तोड़ दिनी नश-नश ...

पद्य के रूप में लोक गाथाओं मे हमें इतिहास की पूर्ण जानकारी सतयुग, त्रेता, द्वापर में ऋषियों द्वारा रचित पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, रामायण, महाभारत तथा वर्तमान कलियुग में विभिन्न संतों, कवियों द्वारा रचित लोक गाथाओं से मिलती है।

सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग के प्रारम्भ तक मनुष्य अपनी भावनाओं, क्रिया-कलापों, राजाओं द्वारा पालित सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, शासकीय, एवं युद्ध संबधी नियमों तथा युद्धों का वर्णन उस समय की प्रचलित ''संस्कृत'' भाषा में गेय पद्यों के रूप में करता था।

सृष्टि की उत्पति से पूर्व कल्पादि से इतिहास लेखन करना है तो हमें उस समय की ''लोक-गाथा'' के रूप में रचित पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, रामायण, महाभारत, आदि सद्ग्रंथ प्रमाणिक होंगे। किसी भी लोक गाथा में केवल राजवंशवृत का वर्णन हीं नहीं, अपितु सम्पूर्ण लोकवृत का वर्णन होने पर ही वह इतिहास के रूप में ग्राह्य होती है।

इस रूप में लोक गाथा के रूप में रचित महाभारत स्वयं को सर्व विषय व्यापक सिद्ध करता है –

धर्मचार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षय।
यदिंहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्रचित्।। (महा. आदि. ५६/३३)

''वाल्मीकि कृत रामायण भी उस समय की लोक भाषा संस्कृत में रचित इतिहास का निदर्शन है। त्रेता युग की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक जानकारी तथा युद्धकाल का वर्णन हमें संस्कृत भाषा में रचित रामायण में मिलता है।

तुलसीदास द्वारा रचित ''रामचरित मानस'' लोक भाषा हिन्दी में लिखी गई महानतम् ''लोक गाथा'' है। तुलसीदास जी ने लोक गाथा के रूप में हनुमान चालीसा तथा हनुमान अष्टक की भी रचना की। इन दोनों में ही हनुमान के चरित्र का सम्पूर्ण चित्रण किया गया है।

लोक गाथाओं द्वारा काल क्रम का निर्धारण, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, व्यावसायिक स्थिति की जानकारी इतिहास लेखन में सहायक सिद्ध होती है। बहुत से राज वंशों की वंशावलियां भी लोक गाथाओं में कालक्रम के साथ संरक्षित है। लोक गाथाओं में भगवान श्री कृष्ण के सामर्थ्य व उनकी कृपा का वर्णन भी हुआ है–

गज और ग्राह लड़े जल भीतर दारूण रूदन मचाये।
गज की टेर सुनी रघुनन्दन गरूड़ छोड़ उठ ध्याये।।

लोक गाथाओं मे जीवन में विस्मृत हुई भगवान के प्रति समर्पण की भावना को याद रख अपने जीवन को संवारने तथा मृत्यु के बाद मोक्ष की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा दी गई है। गर्भावस्था से मृत्यु तक के जीवन के क्रिया कलापों का वर्णन इन लोक गाथाओं मे आने वाली पीढ़ी के लिये संरक्षित है।

लोक गाथाओं में वचनबद्धता का चित्रण किया गया है। धर्म के लिए तथा कर्तव्य परायणता हेतु पिता-पुत्र, स्वामी-सेवक, मे भी डटकर युद्धों का वर्णन है।

खानदान पहचान बताऊ, हां करले तो ना कोन्या,
बचनों ऊपर मरते मरते, प्राणों की परवाह कोन्या।
सूर्यवंश और सोम वंश में पढ देखो इतिहास मिले,
गीता-मनु-स्मृति अन्दर नित नूतन वर्ण विचार मिलै।
छः, चार, आठ, दस, महाभारत में, रामायण का सार मिलै,
सांची कहे समुद्र सुखजा, पण गोडा सैंती गार मिलै।
रामचन्द्र-लव-कुश भीड़गे, रामायण गवाह आपकी हो,
हनुमत-मकर ध्वज, भीड़गे, टकर गदा चाप की हो।
पिता-पुत्र को गया बांध के, दिया जावण न राह कोन्या।

इतिहास लेखन के लिये मनुष्य के जीवन में घटित घटनाओं, उनकी भावनाओं, शासन व्यवस्था, शिक्षा, धर्म, राजनीति, व्यापार, राजा-प्रजा, पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-भाई, मित्र-शत्रु, विजीत एवं पराजित के प्रति व्यवहार की सम्पूर्ण जानकारी का होना आवश्यक है।

लोक गाथा- महाराणा प्रताप

राणा चल पड़े, उनके पीछे-पीछे कुमार अमरसिंह, उनकी प्यारी राजकुमारी और मेवाड़ की महारानी थी। राणा ने सारे साधन नष्ट कर दिये, जिससे मुगल उन सामरिक वस्तुओं का उपयोग कर मेवाड़ की स्वाधीनता को जर्जर न कर सके।

वीर दम्पति ने स्वाधीनता का कठिन व्रत लेकर अपनी माता का दूध सफल कर दिया। उन्होंने पचीस साल तक शक्तिशाली साम्राज्य का सामना किया, मुगलों की छावनियों पर छापा मारना, मुगल-सैनिकों की आँखों से बात की बात में ओझल हो जाना। रानी और राजकुमार के लिये भोजन साम्रगी एवं फल-फूल का प्रबंध करना, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जंगलों में मारे-मारे फिरना ही उनका काम था। उनका दृढ निश्चय था कि बाप्पा रावल का वंशज कभी यवनों और विधर्मियों के सामने मस्तक नहीं झुकायेगा और न उनसे रोटी बेटी का सम्बंध करेगा। महाराणा प्रताप और उनकी राजरानी का वीरतापूर्ण इतिहास मेवाड़ के कण कण में विद्यमान है। राजरानी कभी नहीं चाहती थी कि

जिस राणा सांगा का आतंक हिमालय से रामेश्वर तक छाया हुआ था, उसकी वीर सन्तान कभी यवनों की दासता स्वीकार करें। राजमहल में पराधीन रहकर दीया-बाती करना रानी को असह्य था। वह तो अपने पति के साथ जंगल में रहकर स्वाधीनता भवानी की आरती उतारने में गौरव का अनुभव करती थी। रानी कहा करती थी कि दुःख आयेगे चले जायेगें, लेकिन मर्यादा तथा धर्म के साथ गौरव और कीर्ति तो अमिट ही रहेंगे।

रानी को बड़ी बड़ी विपतियों और असुविधाओं का सामना करना पड़ा। कई बार तो उसने भोजन तैयार कर पति और कुमार के सामने पत्तल और दोने रखे ही थे कि दुश्मन के सैनिकों को आ जाने की आशंका से उन्हें छोड़ देना पड़ा। उपवास पर उपवास होते थे, पर स्वाधीनता की मस्ती तो कुछ और ही थी। एक बार रानी ने घास की रोटी तैयार की। रोटी के आधे आधे टुकड़े का हिस्सा लगता था। राजकुमार अमरसिंह रोटी खाने ही वाला था कि जंगली बिलार ने छीन ली। राज महल में रहने वाला फूलों की सेज पर सोने वाला, सन्तान निर्जन वन स्थली में घास की आधी रोटी भी न पा सका। साध्वी रानी ने लड़के की चीख अनसुनी कर दी। वह नहीं चाहती थी कि इन छोटी-छोटी बातों से पति की चिन्ता बढ़ायी जाये। लेकिन यह छोटी बात नहीं थी। राजकुमार घास की रोटी भी न खाने पाये, क्या यही स्वाधीनता-व्रत था? क्या इसीलिये राणा ने मेवाड़ की पवित्र भूमि से विदा लेने का निश्चय किया था? वह नरसिंह देख रहा था— जिस पत्थर से कलेजे पर साम्राज्य का फौलादी पंजा आघात न कर सका, जिस पर पराधीनता की काली लकीर मान का फूफा अकबर न खींच सका। वह इस दुःख के वज्रपात से चूर-चूर हो गया। राणा ने देखा आसमान काला पड़ गया, जमीन थरथर काँपने लगी, राणा का धैर्य विचलित हो उठा।

वीरहृदया रानी ने अपने प्रियतम की मानसिक स्थित जान ली, फिर भी उसे विश्वास था हिमालय भले ही झुक जाये, सात महासागर भले ही सूख जाये, लेकिन राणा, जिनकी नसों में पद्मिनी का खून बह रहा है, जिनके अंग-अंग में राणा साँगा की वीरता भरी है, कभी विचलित नहीं होंगे। प्रताप ने कहा, प्राणेश्वरी ! अब तुम लोगों की दुःख ये आँखे न देखेगी। मैनें अच्छी तरह विचार कर देख लिया है कि अकबर से सन्धि कर लेने मे ही हित है।'

सन्धि पत्र भेजा गया। बीकानेर के राजा के भाई महाराज पृथ्वीराज ने पत्र पर सन्देह प्रकट किया। उसने भरे दरबार में कहा कि सिसोदिया-कुल अपनी स्वाधीनता कभी इस तरह नीलाम पर नहीं चढा सकता, उसने राणा को एक लम्बा-चौड़ा पत्र लिखा। राणा का विचार बदल गया और थोड़े ही दिनों में उसने अपने राज्य का अधिकांश भाग अकबर से छीन लिया।

अरे घास री रोटी ही, जद बन-बिलावड़ो ले भाग्यो।
नान्हों सो अमर्‌यों चीख पड़्यो, राणा रो सोयो दुःख जाग्यो।।
हूँ लड़्यो घणो, हूँ सह्‌यो घणो, मेवाड़ी मान बचावण नै।
मैं पाछ नहीं राखी रण में, बैरयां रो खून बहावण नैं।।
जब याद करूँ हल्दीघाटी, नैणा में रंगत उतर आवै।
सुख दुख रो साथी चेतकड़ो, सूती सी हूक जगा जावै।।
पण आज बिलखतो देखूँ हूँ जद राजकंवर नै, रोटी नै।

तो क्षात्र धर्म नै भूलूँ हूँ, भूलूँ हिदंवाणी चोटी नै।।
आ सोच हुई दो टूक तड़क, राणा री भीम बजर छाती।
आँख्या मैं आँसू भर बोल्यो, हूँ लिखस्यूँ अकबर नै पाती।।
राणा रो कागद बाँच हुयो, अकबर रो सपनो-सो सांचो।
पण नैण कर्‌या बिसवास नहीं, जद् बाँच बाँच ने फिर बाँच्यो।।
बस दूत इसारो पा भाज्यो, पीथल नै तुरत बुलावण नै।
किरणां रो पीथल आ पुग्यो, अकबर रो भमर मिटावण नै।।
''म्हें बांध लियो है पीथल! सुण, पिंजरा में जंगली सेर पकड़।
यो देख हाथ रो कागद है, तू देखां फिरसी कियां अकड।।
हूं आज पातस्य धरती रो, मेवाड़ी पाग पगां में है।
अब बता मनै किण रजवट नै, रजपूती खून रंगा में है।।
जद पीथल कागद ले देखी, राणा री सागी सैनाणी।
नीचैं सूं धरती खिसक गयी, आख्यों मैं भर आयों पाणी।।
पण फेर कही तत्काल संभल'' आ बात सफा ही झूठी है।''
राणा री पाग सदा ऊंची, राणा री आन अटूटी है।।
''ल्यो हुकुम होय तो लिख पूछूं, राणा नै कागद रै खातर।''
''लै पूछ भला ही पीथल! तू, आ बात सही'' बोल्यो अकबर।।
''म्हें आज सुणी है, नाहरियों, स्याला रै सागै सोवैलो।
म्हें आज सुणी है, सूरजड़ो, बादल री ओंटा खोवैलो।।''
पीथल रा आखर पढता ही, राणा री आँख्यां लाल हुई।
''धिक्कार मनै, हूँ कायर हूँ'' नाहर री एक दकाल हुई।।
''हूँ भूख मरूं, हूँ प्यास मरूं, मेवाड़ धरा आजाद रहैं।
हूँ घोर उजाड़ां मैं भटकूँहूँ, पण मन में माँ री याद रह्वै।।
पीथल के खिमता बादल री, जो रोकै सूर उगाली नै।
सिंहा री हाथल सह लेवै, बा कूंख मिली कद स्याली ने।।
जद राणा रो संदेश गयो, पीथल री छाती दूणी ही।
हिंदवाणों सूरज चमके हो, अकबर री दुनियां सूनी ही।।

वास्तुविद् मैन मार्केट,
गौशाला रोड़, चिड़ावा
राजस्थान

ठाकुर रामसिंह जी के जन्मशताब्दी कार्यक्रम

चेतराम गर्ग

श्रद्धेय इतिहास पुरुष स्वर्गीय ठाकुर रामसिंह जी की जन्म शताब्दी के कार्यक्रमों की शृंखला में चार मुख्य कार्यक्रम भिन्न-भिन्न प्रान्तों में आयोजित हुए। ये सभी कार्यक्रम ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान, नेरी के विचार -विमर्श से निश्चित हुए और नेरी शोध संस्थान के समन्वय प्रमुख के दायित्व से मैं स्वयं सभी कार्यक्रमों में सम्मिलित रहा।

प्रथम कार्यक्रम : दीन दयाल शोध संस्थान, दिल्ली

बाबा साहिब आप्टे स्मारक समिति, दिल्ली द्वारा दीन दयाल शोध संस्थान में मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीय कलियुगाब्द ५११७, विक्रमी संवत् २०७२, मार्गशीर्ष प्रविष्टे २६, १३ दिसम्बर, २०१५ को आयोजित हुआ। इस कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि – दिल्ली प्रान्त के सह-प्रान्त संघ चालक अधिवक्ता श्री अलोक कुमार जी थे और अध्यक्षता उत्तर क्षेत्र के संघ चालक प्रसिद्ध शिक्षाविद् बजरंग लाल गुप्त जी द्वारा की गई। बाबा साहिब आप्टे स्मारक समिति के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मीश्वर झा, सचिव श्री कुलवीर शर्मा, संगठन सचिव श्री सुरेन्द्र नाथ शर्मा, कोषाध्यक्ष श्री जी.जी. शर्मा, कार्यालय मन्त्री श्रीमती कल्पना गर्ग आदि पदाधिकारी कार्यक्रम में उपस्थित थे। नेरी शोध संस्थान के समन्वय प्रमुख के साथ महासचिव श्री राजेन्द्र शर्मा ने भाग लिया।

बाबा साहिब आप्टे स्मारक समिति के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मीश्वर झा ने अपने सम्बोधन में बतलाया कि इस समिति की स्थापना श्रद्धेय ठाकुर रामसिंह जी द्वारा की गई है जिसका उद्देश्य भारत के प्राचीन गौरवशाली इतिहास को विश्व के सामने रखना है। बाबा साहिब आप्टे स्मारक समिति प्रतिवर्ष श्रीधर वाकणकर राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करती है। इस वर्ष इस भव्य समारोह में महाभारत पर किए गए उत्कृष्ट कार्य के लिए डॉ. सुभाष जी आर्य को यह पुरस्कार प्रदान किया गया। डॉ. सुभाष आर्य गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में उपकुलपति के पद पर रहे हैं तथा शिक्षा के क्षेत्र में इनकी विशेष भूमिका रही है।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि श्री आलोक कुमार जी ने बतलाया कि जब ठाकुर रामसिंह जी अमृतसर में विभाग प्रचारक थे, उस समय उनके पास अमृतसर महानगर के प्रचारक का दायित्व था। इसलिए ठाकुर जी का आचार-व्यवहार एवं कार्यशैली उनके जीवन के लिए अमूल्य रही है। देश में छिड़ी सहिष्णुता और असहिष्णुता की बहस पर विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि आज देश को दो खेमों में खड़ा कर दिया गया है। एक वो जो अपने को देश और विदेश में धर्मनिरपेक्ष होने का नाटक रचते हैं। दूसरे वे जो सच्चे अर्थों में सब धर्मों का सम्मान करते हुए इस राष्ट्र की उन्नति के लिए काम कर रहे हैं। असहिष्णुता के नाम पर राष्ट्रीय सम्मान वापिस करने की एक होड़ सी मची रही। तर्क

दिया जा रहा था कि वर्तमान सरकार सहिष्णु नहीं है। यहां पर अल्पसंख्यक अपने को भयभीत महसूस कर रहे हैं। दादरी की एक घटना से इन बुद्धिजीवियों के अन्दर इतना राष्ट्र प्रेम उभर पड़ा कि इन्होंने अपने सम्मान लौटा दिए। क्या देश की यह पहली घटना है जिस पर इन का मन इतना विचलित हो गया? कश्मीरी हिन्दुओं पर इतने अत्याचार हुए उस समय तो इन को कोई असहिष्णुता महसूस नहीं हुई। मोपाला के हिन्दुओं को जब जबरन मुसलमान बनाया जा रहा था तब इन को असहिष्णुता महसूस नहीं हुई। भारत में राजनीति व विदेशी हाथों से चलने वाले ये तथाकथित विद्वान इस देश को भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित जीवन संरचना की दिशा में बढ़ रहे कदमों को रोकना चाहते है। इस में अपने देश में चल रहे षड्यन्त्रकारी राजनीतिक तन्त्र मुख्यतः काम कर रहे हैं जिन्हें किसी भी कीमत में अपनी सत्ता चाहिए और समाज आपस में भिड़ता रहे। ये सब राजनीति के हथियार है जिस के बारे मे समाज के अन्दर जन जागरण करने की आवश्यकता है।

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. बजरंग लाल गुप्त जी ने कहा कि किसी भी राष्ट्र को अपने सही इतिहास की जानकारी रहना आवश्यक है। बहुत लम्बे समय तक गुलामी के कारण अपने ही देश के इतिहासकारों ने बहुत अधिक क्षति पहुंचाई है। भारत की सही तस्वीर विश्व के सामने स्वतन्त्रता के उपरान्त रखने की जो आवश्यकता थी, वह अधूरी रह गई। जिन तथाकथित बुद्धिजीवियों ने अपने आप को भारत के जानकार सिद्ध किया, वास्तव में उन्हें भारतीय प्राचीन इतिहास की जानकारी ही नहीं है। जितना अक्षय भण्डार संस्कृत साहित्य का हमारे पास है उतना विश्व के अन्य किसी राष्ट्र के पास नहीं है। उसे सही परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है। इस क्रम में बाबा साहिब आप्टे, मोरोपन्त पिंगले तथा ठाकुर रामसिंह जी के प्रयासों ने हमें भारत के सही इतिहास लिखने की दिशा में आगे बढ़ाया है। आर्य भारत के मूल निवासी हैं, सरस्वती नदी की खोज, भारतीय कालगणना विश्व की प्राचीनतम एवं वैज्ञानिक कालगणना है, जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर परिणाम कारक कार्य हुए हैं। इस दिशा में अभी और अधिक कार्य किए जाने की आवश्यकता है।

द्वितीय कार्यक्रम : संस्कृति भवन - नैमिषारण्य सभागार, कुरुक्षेत्र

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान कुरुक्षेत्र एवं ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी हिमाचल प्रदेश के संयुक्त तत्वाधान में कुरुक्षेत्र के संस्कृति भवन के नैमिषारण्य सभागार में विक्रमी संवत् २०७२ माघ कृष्ण पंचमी, प्रविष्टे १६ शुक्रवार (२९ जनवरी, २०१६) को ठाकुर रामसिंह शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य पर ''भारतीय इतिहास की विसंगतियां और राष्ट्रवादी दृष्टि' विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में मुख्य वक्ता के रूप में केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश, धर्मशाला के कुलपति डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के क्षेत्र सम्पर्क प्रमुख कृष्ण सिंघल जी ने की। इस अवसर पर शोध संस्थान नेरी के महासचिव श्री राजेन्द्र शर्मा, समन्वय प्रमुख श्री चेतराम गर्ग, विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान के शोध निदेशक डॉ. हिम्मत सिंह जी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के शैक्षिणिक विषयक अधिष्ठाता डॉ. राघवेन्द्र तनवर उत्तर क्षेत्र विद्या भारती के संगठन मन्त्री श्री हेम चन्द्र जी, डॉ. राजेन्द्र

त्रिपाठी, डॉ. ओम प्रकाश अरोड़ा, डॉ. रामेन्द्र आदि विद्वानों ने संगोष्ठी में भाग लिया।

डॉ. कुलदीप अग्निहोत्री ने कहा कि हमारे इतिहास के स्रोत संस्कृत भाषा की पुस्तकों और पाण्डुलिपियों में विद्यमान है। अंग्रेजों ने हमारी प्राचीनतम एवं विश्व की सर्वोत्तम भाषा संस्कृत के प्रति उदासीनता पैदा की। अंग्रेजी भाषा को महत्त्व दिया गया। अंग्रेजों ने बड़ी चतुराई से भारतीय साहित्य, इतिहास को तोड़ा मरोड़ा। अंग्रेजों की इस चाल पर भारतीय साम्यवादी विचारधारा के चिन्तक उनके पिछलग्गू बन गए। यदि पाश्चात्य चिन्तन के आधार पर भारतीय इतिहास को देखने की कोशिश की जाएगी तो कुछ समझ में नहीं आएगा।

ठाकुर रामसिंह जी जिन की जन्मशताब्दी हम मना रहे हैं। वे इतिहास के चिन्तक थे। उन्होंने इतिहास को पढ़ा ही नहीं था, बल्कि उसको बड़ी सावधानी से समझा भी था। उन्होंने पूरे भारत के इतिहास का प्राचीन से लेकर वर्तमान तक भारतीय दृष्टि से अध्ययन किया था। ठाकुर जी का मत था कि इतिहास को मूल तथ्य और प्रमाण के साथ सही-सही रखने से ही राष्ट्र की उन्नति में नवीन पीढ़ी सहायक होती है। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के प्रोफेसर तनवर जी ने इस अवसर पर कहा कि भारत के क्रान्तिकारियों का इतिहास समाज की युवा शक्ति के सामने रखा जाना चाहिए जो हमारे इतिहास के पाठ्यक्रमों से विलुप्त होते जा रहे हैं।

श्री कृष्ण जी सिंघल ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि जब भी भारत के विभाजन का सही इतिहास लिखा जाएगा, ठाकुर रामसिंह जी का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा। ठाकुर रामसिंह जी विभाजन के समय अमृतसर में संघ के विभाग प्रचारक थे। ठाकुर जी के कुशल नेतृत्व में ही अमृतसर तथा विस्थापित लाखों हिन्दुओं की रक्षा हो पाई है। ठाकुर जी भारत के इतिहास के बारे में कहा करते थे – भारत का इतिहास गुलामी सहन करने का नहीं, गुलामी के विरुद्ध सतत् संघर्ष करने का रहा है।

तृतीय कार्यक्रम : युवा विकास केन्द्र परिसर, अमीन गांव, असम

भारतीय इतिहास संकलन समिति गुवाहटी (असम) द्वारा ठाकुर रामसिंह जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में गुवाहाटी से १० कि.मी दूर अमीन गांव के युवा विकास केन्द्र परिसर में 'इतिहास लेखन एवं शोध 'भारतीय कालगणना' तथा 'ठाकुर रामसिंह तथा उनका जीवन' विषयों पर कलियुगाब्द ५११७, विक्रमी संवत् २०७२ माघ कृष्ण ६-७, फाल्गुन प्रविष्टे १-२ (१३-१४ फरवरी, २०१६) दो दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

पहले दिन माघ कृष्ण ६ को सायं ५ बजे से ७.३० बजे तक पूर्वोत्तर क्षेत्र के संगठन सचिव श्री हेमन्त मजूमदार ने उत्तर असम से आए इतिहास संकलन योजना समिति से जुड़े विद्वानों एवं पदाधिकारियों के साथ इतिहास लेखन एवं शोध विषय पर विस्तृत चर्चा की। उन्होंने विद्वानों को सम्बोधित करते हुए कहा कि इतिहास को भारतीय दृष्टि से लिखा जाना चाहिए। इसके लिए हमारे

पास साहित्यिक एवं पुरातात्त्विक प्रमाण उपलब्ध है। ठाकुर रामसिंह जी का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा, ठाकुर जी ने हमारा मार्गदर्शन किया कि हमारे देश का इतिहास कोई दो-चार हजार वर्ष का नहीं अपितु १९७ करोड़ वर्ष का इतिहास है। यह इतिहास भारतीय कालगणना के अन्तर्गत आता है। इस समझने के लिए अपने संस्कृत साहित्य को पढ़ने व समझने की आवश्यकता है। इतिहास संकलन योजना समिति तथा ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान इस दिशा में कार्य कर रहा है और आगे भी इसे ओर गति से बढ़ानेकी आवश्यकता है।

दूसरे दिन माघ कृष्ण ७ को प्रातः ग्यारह बजे ठाकुर रामसिंह और उनका जीवन विषय पर असम के विभिन्न क्षेत्रों से आए विद्वानों तथा संघ से जुड़े पुराने कार्यकर्ताओं ने अपने विचार प्रकट किए।

नेरी शोध संस्थान के समन्वय प्रमुख श्री चेत राम गर्ग ने ठाकुर रामसिंह के जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया कि ठाकुर रामसिंह जी में समाज को जोड़ने की अद्‌भुत क्षमता थी। ठाकुर जी के जीवन में माता की कोमलता, पिता का अनुशासन तथा गुरु की तरह ज्ञान से भरा हुआ था। अक्तूबर २००५ से जीवन के अन्तिम समय तक उन्हें ठाकुर जी का सानिध्य प्राप्त हआ। ९६ वर्ष की आयु में भी कुछ विशेष कर गुजरने का सामर्थ्य रखते थे। ठाकुर जी जहां भी जाते थे अपनी एक अमिट छाप छोड़ते थे।

ठाकुर रामसिंह जी कहते थे कि मैंने इतिहास तो पढ़ा है लेकिन इतिहास की सही समझ मुझे संघ के कार्य करते हुए प्राप्त हुई। जब ठाकुर जी के पास अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना के राष्ट्रीय अध्यक्ष का गुरुतर दायित्व आया जो ठाकुर जी ने उस कार्य को भी बड़ी कुशलता से किया।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री जगन्नाथ बरुआ महाविद्यालय के पूर्व अध्यक्ष भव कृष्ण मिश्र ने कहा कि कुछ लोग जनता में मतभेद फैलाकर देश को एक संकटजनक रास्ते पर ले जाने की साजिश करने में लगे हैं। ऐसी ताकतों से लड़ने के लिए भारतीयों को एकजुट होने की आवश्यकता है। ठाकुर रामसिंह जी हम सबके प्रेरणा स्रोत रहे हैं। उन्होंने असम में संघ कार्य तथा इतिहास के कार्य को गति दी थी। उनके बताए गए मार्ग पर चलने तथा ऐसे महापुरुषों का बार-बार स्मरण कर जीवन में राष्ट्र के लिए समर्पित होकर काम करने की प्रेरणा मिलती है। यह हम असम वासियों का सौभाग्य है कि ठाकुर जी ने अपने जीवन के बहुमूल्य २१ वर्ष असम की हिन्दू शक्ति को जागृत करने में लगाई।

डॉ. दलीप सरकार, पूर्वोत्तर क्षेत्र के सह क्षेत्र प्रचारक गौरी दा, डॉ. सीता नाथ जी, कृष्ण कुमार मौर्य जी आदि हज़ारों यशस्वी कार्यकर्ताओं को ठाकुर जी ने अपने हाथों से घढ़ा और सब को देश की सेवा करने की प्रेरणा दी।

कार्यक्रम में पधारे अनेक वक्ताओं ने ठाकुर जी के जीवन से जुड़े संस्मरण सुनाए। डॉ. सीता नाथ जी ने अपने संक्षिप्त उद्‌बोधन में कहा कि आज समाज हित में जो भी हम काम कर पा रहे हैं वह

सब ठाकुर जी की प्रेरणा से सम्भव हुआ। उन्होंने कहा कि जब मैं पढ़ाई करने गुवाहाटी आया तो ठाकुर जी का ध्यान केवल हमारे ऊपर संघ कार्य करने का हीं नहीं रहता था। वे हमारी पढ़ाई का भी विशेष ध्यान रखते थे। पढ़ाई ठीक हुई तो संघ कार्य भी ठीक होगा। पढ़ाई नहीं हुई तो संघ कार्य कर पाना भी मुश्किल रहेगा।

डॉ. दलीप सरकार ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि ठाकुर जी हमारे सब कुछ थे। ठाकुर जी जो कार्य बताते थे उसके लिए हम मना कर ही नहीं पाते थे। चौथी कक्षा में पढ़ते हुए ही ठाकुर जी के सम्पर्क में आ गए। ठाकुर जी शाखा जाने के लिए नहीं कहते थे। अचछे सम्बन्ध स्थापित करते थे। हमें वीर हकीकत राय की कहानी हरिसिंह नलवा और देश के क्रान्तिकारियों का जीवन चरित्र सुनाते थे। हम उनकी बातें सुन-सुन कर ही शाखा में गए।

कार्यक्रम समापन पर पूर्वोत्तर क्षेत्र के सह क्षेत्र प्रचारक श्री गौरी दा ने ठाकुर जी के यशस्वी जीवन से प्रेरणा लेकर भारत माता के लिए कार्य करने की बात की।

चतुर्थ कार्यक्रम : श्रीराम आश्रम स्कूल सभागार, अमृतसर

माननीय ठाकुर रामसिंह जी का जन्मशताब्दी समारोह अमृतसर में श्रीराम आश्रम स्कूल के सभागार में कलियुगाब्द ५११७, विक्रमी संवत् २०७२, फाल्गुन कृष्ण ५, प्रविष्टे १६ रविवार (२८ फरवरी, २०१६) को आयोजित हुआ।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि जम्मू-कश्मीर के पूर्व उपमुख्यमन्त्री श्री निर्मल सिंह और मुख्य वक्ता अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. सतीश मित्तल जी थे। वरिष्ठ प्रचारक मा. महावीर जी (राष्ट्रीय कार्यकारणी सदस्य), उत्तर क्षेत्र प्रचारक प्रमुख श्रीमान रामेश्वर जी, ठाकुर रामसिंह जन्मशताब्दी समारोह पंजाब के अध्यक्ष डॉ. बलदेव राज चावला, नेरी शोध संस्थान के निदेशक मण्डल के सदस्य श्री प्रेम सिंह भरमौरिया, श्री सुरेन्द्र नाथ शर्मा, चेतराम गर्ग एवं लेखक प्रमुख डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, वरिष्ठ पत्रकार इरविन खन्ना, मेयर बख्शी राम अरोड़ा, डॉ करुणेश गुप्ता, डॉ. भीमराव, एडवोकेट विपन भसीन, राजेश कालिया, पूर्व मेयर श्वेत मलिक, राकेश गिल, कृष्ण कुमार अरोड़ा, ठाकुर बलवन्त सिंह, राजेन्द्र पराशर, राजेश ज्योति, गौतम कुकरेजा, हरबिन्दर अग्रवाल, राकेश मदान आदि अनेक प्रमुख व्यक्ति इस कार्यक्रम में उपस्थित थे।

अमृतसर के वरिष्ठ स्वयंसेवक रवि मेहरा जी ने इस अवसर पर ठाकुर जी को याद करते हुए कहा कि ठाकुर जी राष्ट्रीय कार्यों के कुशल शिल्पी थे।

पंजाब टैक्निकल विश्वविद्यालय पूर्व कुलपति डॉ. रजनीश अरोड़ा ने बताया कि मैं बी.टेक करने के बाद अपने पूर्व निश्चय के साथ प्रचारक निकलने के लिए आ गया। ठाकुर जी ने मुझे मना किया और कहा कि तुम ने पी.एच.डी. करने की सोची है। उसे पहले पूरा करो उससे तुम और अधिक संघ कार्य में टिक सकोगे। परन्तु में उस समय माना नहीं। प्रचारक बन गया। बाद में पढ़ाई पूरी की।

मेरे मन में आज भी यह मलाल रहता है कि शायद उस समय ठाकुर जी की बात को मान लिया होता तो शायद कुछ और परिस्थितियां होंती।

डॉ. बलदेव चावला जी ने बताया कि यदि पंजाब में आतंकवाद का मुकाबला किया जा सका तो इस का श्रेय ठाकुर रामसिंह जी को जाता है। जीवन में शुचिता पर बात करते हुए डॉ. चावला जी ने बताया कि जब मेरे बेटे डॉ. जयन्त की शादी होनी थी उस समय ठाकुर जी ने कहा कि डॉ. साहब सामाजिक काम करने वालों को समाज देखता है। शादी की जो तिथि ठाकुर जी ने दी उसी तिथि को शादी हुई। सवा रुपये में रोका टोका किया। ऐसा ही दूसरे बेटे की शादी में किया। यह सब ठाकुर जी की प्रेरणा से सम्भव हो सका। ठाकुर जी में यह कहने और करवाने का समार्थ्य था।

उत्तर क्षेत्र प्रचारक प्रमुख श्रीमान रामेश्वर जी ने ठाकुर जी का स्मरण करते हुए कहा कि ठाकुर रामसिंह अनिकेत, कर्मठ कर्मयोगी थे। ९० वर्ष की आयु में वे दिल्ली कार्यालय में तीसरी मंजिल में रहते थे। मैंने कार्यालय प्रमुख भोला नाथ जी को कहा कि क्या ठाकुर जी के रहने की व्यवस्था प्रथम तल पर होने में कोई कठिनाई है। भोलानाथ जी ने कहा, मैं तो कई बार कह चुका हूं। आप कह कर देख लीजिए। मैंने ठाकुर जी को कहा , ठाकुर जी क्या आप प्रथम तल पर रह सकते हैं। नीचे कमरे हैं। दिन में तीन बार उतरना-चढ़ना। तकलीफ होती है। आप लिफ्ट का प्रयोग नहीं करते हैं। ठाकुर जी ने उत्तर दिया, भाई रामेश्वर जी तीन बार उतरने चढ़ने से मेरा व्यायाम हो जाता है। आप को पता है कि मैं डायविटिक हूं।

केन्द्रीय कार्यकारणी के सदस्य मा. महावीर जी ने बताया कि ठाकुर जी के साथ परिचय तो १९६४-६५ में हो गया था। १९७१ में जालन्धर संघ शिक्षा वर्ग में मैं अधिकारी व्यवस्था में था। मैंने अगरबती जलाई और दरवाजा पर लटकाया दी। उससे नीचे आग गिरी तो कुछ कपड़े जल से गए। ठाकुर जी ने कुछ नहीं बोला। कोई डांट नहीं लगाई। पर व्यवस्था पक्ष का विषय जरूर रखा। व्यवस्था करते समय किन-किन बातों ध्यान रखना चाहिए, इसके लिए जागरूक कर गए।

कार्यक्रम के मुख्य वक्ता डॉ. सतीश मित्तल जी ने कहा कि जिस कार्यक्रम का संचालन पूर्व कुलपति रजनीश अरोड़ा जी कर रहे हो, मंच पर संघ के दो वरिष्ठ प्रचारक बैठे हो, उसी मंच पर हिमाचल प्रदेश, पंजाब व जम्मू कश्मीर तीन राज्यों के कार्यकर्ता बैठे हो, मेरे सामने सभागर में हिमाचल प्रदेश, पंजाब तथा जम्मू कश्मीर, दिल्ली तक के कार्यकर्ता बैठे हुए है, यह उस महान कर्मयोगी के प्रति श्रद्धा व समर्पण का भाव है, जिन्होंने हम सब को घढ़ा है। राष्ट्र सेवा का मार्ग दिखाया है। ठाकुर रामसिंह जी एक खुली किताब थे। जिस में न कोई कौमा था, न कोई सेमिकौलन, न कोई फुलस्टाप। जीवन का एक ही ध्येय चरेवैति चरेवैति........चलते जाना, चलते जाना।

ठाकुर साहब ने हम सब को घढ़ा। इतिहास की दृष्टि हमें ठाकुर जी से मिली है। इतिहास जरूर विश्वविद्यालय में पढ़ाया करते थे परन्तु इतिहास की सही दृष्टि हमें ठाकुर जी ने ही दी है।

हम देखते है कि दुनिया के सब देशों ने १५-२० वर्षों में अपने अपने देश के इतिहास के सिलेबस को बदला। चाहे वह अमेरिका, इग्लैंड हो, हालैंड हो या अन्य कोई देश। अपने देश में वही इतिहास पढ़ाया जा रहा है जो गुलामी का इतिहास है। उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। ठाकुर जी कहते थे इतिहास कोई मनोरंजन का विषय नहीं है। यह राष्ट्र निर्माण का विषय है। यह गाईड फॉर दॉ नेशन है। यह लाईट हाऊस होता है। ठाकुर जी के मार्गदर्शन के कारण ही आज देश में इतिहास संकलन और शोध संस्थान नेरी का कार्य बढ़ने लगा है। यह यशस्वी होगा ऐसा हमें दिखाई देता है।

शताब्दी समारोह में मुख्यअतिथि जम्मू कश्मीर के पूर्व मुख्यमन्त्री डॉ. निर्मल सिंह ने कहा कि किसी भी देश को दिशा देने में इतिहास की बहुत बड़ी भूमिका रहती है। जम्मू कश्मीर में अलगाववाद का एक बड़ा कारण सही इतिहास का अभाव है। देश के सामने सही इतिहास लाने का ठाकुर जी ने प्रयास किया। उनका प्रयास आगे बढ़ेगा जिससे राष्ट्र शक्ति और गौरव उन्नत होगा।

स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण)

निर्मल भारत अभियान/स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) (**NBA/SBM**) : निर्मल भारत अभियान वर्ष 2012-13 से जिले में कार्यान्वित की जा रही है अब उक्त परियोजना का नाम निर्मल भारत अभियान से बदलकर दिनांक 02-10-2014 से स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) रखा गया है। इस परियोजना के लिए भारत सरकार द्वारा मु. 1482.83 लाख रु. स्वीकृत किया है जिसमें केन्द्र का 75% भाग तथा राज्य सरकार 25% भाग है। वर्ष 2012-13 से लेकर वर्ष 2015-16 में दिनांक 31.12.2015 तक इस परियोजना के अन्तर्गत जिले के पास प्रारम्भिक शेष तथा अन्य प्राप्तियों सहित कुल उपलब्ध राशि मु. 996.90 लाख रु. में से समस्त विकास खण्डों को विभिन्न घटकों के अन्तर्गत मु. 242.40 लाख रुपये जारी किया गया है जिसमें से मु. 181.08 लाख रुपये निम्न अनुसार जिला स्तर/खण्ड विकास अधिकारियों द्वारा विभिन्न घटकों में व्यय किया गया है जिसका व्यौरा निम्न अनुसार है -

1. व्यक्तिगत शौचालय 78.69 लाख व्यय कर 680 व्यक्तिगत शौचालय निर्मित किए गये हैं।
2. सामूहिक शौचालय 32.40 लाख व्यय कर 18 सामुदायिक शौचालय निर्मित किए गये हैं।
3. स्कूल शौचालय 0.77 लाख व्यय कर 02 शौचालय निर्मित किए गए हैं।
4. आंगनबाड़ी शौचालय 1.20 लाख व्यय कर 12 शौचालय निर्मित किए गए हैं।
5. ठोस तरल एवं कचरा प्रबन्धन 55.00 लाख रु. जिले की 5 पंचायतों नमज्ञा, जंगी, रकछम, बटसेरी तथा पौंडा को जारी किया गया है।
6. प्रशासनिक व्यय 5.65 लाख
7. सूचना, शिक्षा एवं सम्प्रेक्षझण 7.37 लाख

उपनिदेशक एवं परियोजना अधिकारी,
जिला ग्रामीण विकास अभिकरण
जिला किन्नौर स्थित रिकांगपिओ